THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_176009
UNIVERSAL
LIBRARY

जेल में,

(दो संवाद)

लेखक :
ब्रिजलाल बियाणी

हिन्द प्रकाशन
अकोला (बरार)

प्रकाशक :
राजस्थान प्रिं. एन्ड लिथो वर्क्स लि.,
अकोला

प्रथम संस्करण
जुलाई १९४९
(सर्वाधिकार सुरक्षित)
मूल्य तीन रुपया

मुद्रक :
शिवलाल अग्रवाल
राजस्थान प्रि. एन्ड लिथो वर्क्स लि., अकोला

कहां क्या ?

★

१ विवेक या निर्बलता १

२ कैदी की सेवा ६१

यह क्यों ?

भारत माता के मस्तिष्क से परतंत्रता के भार को हटाकर उसे ऊंचा करने के लिये, गुलामी की कालिमा से मलीन मुख को उज्जवल करने के हेतु, उसके कुम्हलाये हुए स्वाभिमान सुमन को पुनरपि प्रफुल्लित करने के निमित्त और उसकी मृत मानवता को फिर से जीवित करने के उद्देश से सन् १९४२ का देशव्यापी अहिंसात्मक मुक्ति युद्ध आरम्भ हुआ। वह अन्तिम प्रयत्न हुआ। फलस्वरूप भारत स्वतंत्र हुआ। दुनिया में उसका सर ऊँचा हुआ। उसका मुख तेजस्वी बना। उसका स्वाभिमान बोलने लगा और भारत की मानवता को जगाने का और विकसित करने का मार्ग खुल गया। इस आन्दोलन में भाग लेने वालों ने आराम की सांस ली और अपने आप को धन्य माना।

व्यतीत जीवन की स्मृतियां व्यक्ति के जीवन की सततता है और हैं राष्ट्र के जीवन का इतिहास। मेरे अपने जीवन में इसकी स्मृति है। तीन वर्ष के लम्बे कारावास की आज भी याद है। उसकी कठिनाईयों का आज भी स्मरण है। जेल जीवन कृति का बन्धन है तो विचारों के श्रोत का सहायक भी। विपत्तियां, संघर्ष, समर, त्याग, युद्ध आदि मार्गों से ही जीवन विकसित होता है यदि कठिनाईयों को जीवन.प्रगति का साधन बना लिया जाय, पर जीवन विनष्ट हो जाता है, दब जाता है यदि संकटों को जीवन भार समझ लिया जाय। कर्ता की मनोवृत्ति से कृति का असर संबंध रखता है।

जेल का उपयोग किया गया, जेल के शुष्क वातावरण में विचार उद्यान निर्माण किया गया और अनेक सुमनों का संग्रह किया गया। बन्दीगृह में कैदियों द्वारा पोषित पुष्प पौधों पर प्रफुल्लित सुमनों में वही सौरभ रहता जो स्वतंत्र वातावरण में विकसित फूलों में। प्रत्युत कठिन अवस्था में प्राप्त वस्तुओं का अधिक मूल्य प्रतीत होता है। प्राप्त वस्तु का परिणाम परिस्थिति पर कुछ अशों में अवलंबित रहता है।

विपत्ति का भार हटाने के लिये भावना बल की, विचार के मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है। जीवन में दोनों का स्थान है और आवश्यकता। भावना जीवन सुमन का सौंदर्य है और विचार उसका सौरभ। सौंदर्य एकत्रितता में जीवन की सम्पूर्णता है। जीवन में प्रधानता किसकी है, इसका निर्णय जीवन का कठिन प्रयास हैं। भावना बलबान है। जीवन के साथ उसका जन्म हैं। जीवित रहने की इच्छा उसकी प्रेरणा हैं। उसकी प्राचीनता अनादिकाल की है। भावना के लाखों वर्षों के पश्चात विचार का उद्गम हुआ। मानव जीवन में यही अवस्था। जन्म के साथ भावना, प्रौढता के साथ विचार। भावना जीवन की बाल्यावस्था है और विचार जीवन की प्रौढस्थिति। भावना विरहित विवेक के आसन पर अटल आसीन व्यक्ति ही स्थितप्रज्ञ है। भावना के साथ जन्म लेकर विचारों में जीवन की अन्तिम स्थिति यही

मानव जीवन की प्रगति का मार्ग है। जीवन का अन्तस्थ संघर्ष भावना और विचार के संघर्ष का परिणाम है। इस संघर्ष के निवारण में ही जीवन की शांति है और है बल भी।

बन्दीगृह के बाग से लाये हुए दो संवाद सुमनों को लेकर हिन्दी साहित्य सरस्वती के मन्दिर द्वार पर विनीत भाव से खडा हूं। पुष्पों को देवी के चरणों में अर्पण कर रहा हूं। ये कुसुम साहित्य देवी के कलामय जीवन में वृद्धि करेंगे या उसके श्रृंगार के अयोग्य प्रतीत होंगे इसका मुझे ज्ञान नहीं। अर्पण की पवित्र भावना है। इस पवित्रता में ही मेरे लिये सौंदर्य है, जीवन की कला है और है जीवन का सत्य। कर्ता की मनोवृत्ति और कृति ही उसके जीवन का सार है, उसकी स्वीकृति या आदर यह पराधीन है। स्वाधीनता में मैं संतुष्ट हूं। पराधीनता से निश्चिन्त।

अकोला

२७ जुलाई १९४९

ब्रिजलाल बियाणी

स्वर्गीय बहन

प्रमिलाताई की

स्मृति में

विवेक या निर्बलता

विश्व–मंच पर शक्तियों के संघर्ष और साम्मिलन का सतत एवं सर्वत्र नाटक चल रहा है। नेपथ्य में एक–रात्रता भले ही हो पर मंच पर अनेक पात्रों का संपात है। स्वतंत्रता का सुख संचारी नृत्य भी सौंदर्य कला के नियमों के बंधन से आवृत है तो बंधन की जटिल श्रृंखलाओं से रक्षित

बंदीग्रहों में भी स्वतंत्रता का स्वल्प स्थान विद्यमान है। अमिश्र जीवन-व्यवस्था का प्रायः अभाव-सा दिखाई देता है। मिश्रण के कम अधिक प्रमाण के अनुसार अवस्था का अनुभव और वर्णन है।

शक्तिरुपी समस्त पात्रों के योग्य संघर्ष और उचित मिलन में नाटक का सौंदर्य है तो साथ ही हर पात्र का भी समय और स्थान के अनुसार अभिनय उस पात्र की सफलता और आकर्षकता है। संघर्ष और मिलन के तत्व का विस्मरण, पात्र की असफलता है। हर पात्र की असफलता के प्रमाण में समग्र नाटक की न्यूनता है।

विशाल विश्व-मंच का एक अत्यंत ही छोटासा हिस्सा। बंदीग्रह का स्थान। राजकीय कैदियों के निवास की बॅरक का अहाता। रात्रि के प्रथम पहर की अंतिम घटिका। जेल है पर इस यार्ड में रात्रि में तालाबंदी नहीं। अपने यार्ड में आकाशतले तारों के तिमिरमय प्रकाश में कहीं भी आराम करने की कैदियों को स्वतंत्रता। बंधनमय इस स्वतंत्रता में भी कैदियों की प्रसन्नता। यार्ड में ५–६ बंधुओं का निवास। लंबा चौड़ा अहाता। निरंजन के अलावा अन्य सब की अहाते के एक विभाग में शयन–व्यवस्था। निरंजन का दूसरे हिस्से में दूर एकान्त आराम।

अपने साथियों के साथ वार्तालाप से विराम पा निरंजन अपनी खटिया की ओर रवाना हुआ। जेल अधिकारियों की कृपा से सर्वसाधारण ताला-बंदी के पश्चात् बाहर रखे जाने वाले सेवक–कैदी भी वार्डर के पहरे में अपनी बॅरक में जाकर बंद होने के लिए अन्य अहाते की ओर रवाना हुए।

निरंजन अपनी खटिया के पास पहुंचा। कैदियों द्वारा की गयी बिस्तर की व्यवस्था को उसने पुनर्व्यवस्थित करना आरंभ किया। इस बीच आवाज का आभास आया। निरंजन के हाथ जरा रुके। कान सतर्क हुये।

आवाज की वृद्धि। स्पष्ट श्रवण। धप्प-ॲ-धप्प-ॲ-धप्प-ॲ। दोनों प्रकार की ध्वनि निरंजन के कानों में से हृदय तक प्रवेश कर गई। अंधेरी रात में, दर्शन के अभाव में भी, प्रकाश प्रगट हो गया। निरंजन समझ गया। उसके यार्ड में से गये किसी कैदी को वार्डर ने प्रसाद दिया है। जेल की भाषा में "ठोक किया है"। निरंजन के पैरों में जरा भारीपन आगया। हाथ रुक गये। सात्विक संताप रेषायें उसके चेहरे पर खिंच गयी। क्षण में विचार दौड़ गये। "जेल में कितनी पाशविकता!! बिचारे कैदियों को मारना किस कारण? कानून से मारना मना है। आखों के सामने यह सब किस प्रकार चलने दिया जाय?" इन विचारों के साथ ही क्रिया की प्रेरणा। "वार्डर को डांटा जाय"। अन्याय-स्थान की ओर जाने की प्रबल इच्छा। निरंजन की विचारमय क्षणिक निस्तब्धता दूर हुई। जिधर से आवाज आई थी उधर देखने लगा। वार्डर के हाथ की लालटेन के प्रकाश में कैदियों को अन्य यार्ड में प्रवेश होते और वार्डर को ताला बन्द करते पाया। अपने यार्ड का बन्द दरवाजा सामने दिखाई दे गया। बन्दताला भी स्मृति प्रकाश में दिख गया। कितने ताले? "अन्याय के आगे ताले लगे। न्याय तालों में बन्द है।" निरंजन ने अपनी तात्कालिक निर्बलता का अनुभव किया। विचारमग्न सामने के अहाते की ओर देखता वह अपने पलंग पर बैठ गया। अपनी उमड़ी हुई विकल भावनाओं को विवेक संगीत की लोरी देकर शान्त करने लगा। कभी विचार व्यथित अवस्था में भावनायें स्फूर्ति देती हैं और कभी भावना-विकल मन को विचार शान्ति प्रदान करते हैं। विचार और भावना इनका समन्वय और सहयोग जीवन का सच्चा बल है।

निरंजन ने किसी व्यक्ति को सामने से तेजी के साथ आते देखा। उधर उसका लक्ष्य आकर्षित हुआ। अपने साथियों में से कोई है, यह अनुमान वह लगा सका, पर अन्धेरे के कारण कौन है, इसका निर्णय नहीं कर सका। निरंजन अधिक तीव्रता से देखने लगा। आगमनशील व्यक्ति भी

निकट आता गया। निरंजन ने चन्द्रकान्त को पहचान लिया। उसके आगमन के कारण का अनुमान निरंजन कर गया। चन्द्रकान्त की चाल में उत्तेजना है, उसके चेहरे पर उत्तेजना है और उसका मन उत्तेजनामय हो रहा है।

निरंजन के समीप आते आते ही भरे हुये और उद्वेगमय आवाज में चन्द्रकान्त ने कह डाला। "सुना! वार्डर ने कैदी को कितनी बुरी तरह पीटा। यह सब चल नहीं सकता। इस जंगलीपन को बन्द करना होगा। कल सबेरे जेलर से कहिये। नहीं तो फिर मुझसे रहा नहीं जायगा। नाहक किसी दिन झगड़ा होजायगा। मैं अब इसे बरदास्त नहीं कर सकता।" इस प्रकार कहते कहते चन्द्रकान्त निरंजन की खटिया के निकट आगया।

निरंजन उठकर खड़ा हुआ। उसने चन्द्रकान्त के कंधे पर हाथ रखकर विनय तथा स्नेहपूर्वक कहा। "भैया! बैठो, जरा शान्त होवो। मैं भी इसी घटना से व्यथित और विचारमग्न था कि तुम आगये। अच्छा हुआ। दोनों के हृदय को शान्ति मिलेगी।" चन्द्रकान्त खड़े खड़े ही कुछ क्रोध से कह गया। "तुम्हारी व्यथा विचित्र है। वह आती है, चली जाती है। उसमें कहीं स्थायीत्व है ही नहीं। मुझे तो आज रातभर नींद नहीं आवेगी। यह पहली बार नहीं। अनेक बार हुआ है। कई बार तुमसे कहा। तुमने उसे सुन लिया। यह अन्याय यों ही चलता जारहा है। अब मेरे सहन-शक्ति के परे है। कल मैं जेलर से स्वयं कहनेवाला हूं। जरूरी होगी तो फिर सुपरिन्टेन्डेन्ट से। अब तुम्हारी राह नहीं देखूंगा। समझे? तुम्हें यह कहने के लिये ही आया हूं। तुम्हारी शान्ति और सहनशीलता से हम सब ऊब गये हैं। जेल अधिकारियों की अपेक्षा प्रथम तुम्हरी प्रतिकूल बलवा करना है। निरंजन! यह सब क्या है? हममें कुछ मनुष्यता है या नहीं?"

निरंजन हंस पड़ा। उसने शान्ति से कहा—"बलवा जरूर करना चाहिये। मेरी शांति यदि तुम्हें बलवाखोर बना सके तो उसका कार्य पूरा हो जायगा। तुम्हारा सबका मेरे प्रति इतना आदर और स्नेह है; मैं आभारी अवश्य हूं।"

चन्द्रकान्त ने जरा चिढ़कर कहा—"यह सब विनय और दिखाऊ व्यवहार रहने दो। इस विषय में क्या करोगे सो कहो।"

निरंजन—तुम सारे मित्र जो चाहोगे सो। मैं तुम्हारे कहने के बाहर नहीं हूं।

चन्द्रकान्त—बाहर नहीं। पर करते कुछ नहीं। कई बार तुमसे कहा पर तुमने समझा-सुमझाकर टाल दिया। यह अन्याय चलता ही जाता है। अब अन्तिम अवस्था है। इसका अन्त करना ही होगा। तुम करो; अच्छा है। नहीं, हम तो करेंगे ही। इस जेल में रहना कठिन होगया है। जेल क्या! नरक है।

निरंजन ने चंद्रकान्त के कंधे पर हाथ रखते हुये हृदयग्राही आवाज में कहा—"भैया! चंद्रकान्त! इस प्रश्न को लेकर हम सब अनेक बार उत्तेजित और व्यथित हुये हैं। आपस में कुछ गलतफहमी भी पैदा हुई है। मैंने अनेक बार विचार किया पर किसी निर्णय पर नहीं पहुंचा। आज हम शान्ति के साथ विचार कर हमारा कर्तव्य निश्चित करलें। फिर उसके अनुसार व्यवहार करें। जरा बैठो।"

चन्द्रकान्त—इसमें विचार क्या करना है। विचार विचार में हमारी मनुष्यता का विनाश होरहा है। लंबा चौड़ा विचार करने की इसमें बात ही कौनसी है? स्पष्ट बात है और स्पष्ट है हमारा

कर्तव्य। तुम विचार–दुर्बल होगये हो। हर कृति में विचार और विवेक की रट रहती है। अतिरेक ने तुम्हे आक्रियाशील बना दिया है।

निरंजन ने विचारमग्न आवाज में कहा—यह भी होसकता है। पर विचार करना अनुचित नहीं। मेरे संतोष के लिए ही हम विचार करें। जिस निर्णय पर पहुंचेंगे उसका कल अवश्य पालन करुंगा या उसे अमल में लाने की तुम्हें सहर्ष स्वतंत्रता दूंगा। जरा बैठो; थोड़ा विचार करें।

निरंजन ने चन्द्रकान्त का हाथ पकड़ कर बिस्तर के सिरहाने की ओर बैठाया और स्वयं उसके सन्मुख बैठ गया। जरा देर नीरवता का शान्त समय निकल गया।

विचार विभिन्नता के संघर्ष से व्यथित निरंजन और भावना की दाह से दग्ध चन्द्रकान्त, दोनों क्षणभर के लिए आत्म-रत होगये। बाह्य विश्व जरा ओझल होगया। अंधकार उसी प्रकार अपनी व्याप्ति किये है। तारे वैसे ही चमक रहे हैं। निकट का निशिगंध अपना परिमल फैला ही रहा है। सौरभ और शीतलता युक्त समीर अपनी मस्त गजगति से चल ही रहा है। खटिया की कठोरता और बिस्तर की मृदुता में जरा भी अन्तर नहीं आया है। धरती माता अपनी गतिसे बेलाग घुमाई कर रही है। चारों ओर की सृष्टि निरंजन तथा चंद्रकान्त की अवस्थासे कितनी उदासीन है। हरेक पात्र अपने अपने अभिनय में लगा है।

चन्द्रकान्त के अशान्त मन ने शान्ति का भंग किया। परिमल-प्लावित पवन ने अपने ध्वनि--वाहक कर्तव्य का भी पालन किया। चन्द्रकान्त ने कहा और निरंजन ने सुना—कहो। क्या विचार करना है? तुम्हारे दिलकी निकाल लो ताकि तुम्हें शान्ति से नींद आवे।

निरंजन—यह तुम्हारी कृपा है। हां। हमें यह सोचना है कि जेल में कैदियों को पीटा जाता है या उनके साथ दुर्व्यवहार किया जाता है, उस विषय में हमारा क्या कर्तव्य है ?

चन्द्रकान्त—क्या कर्तव्य है ? इसमें सोचने की कौनसी बात है ? बिलकुल सीधा सवाल और सरल उत्तर है। कैदियों को मारना या उनके साथ दुर्व्यवहार करना अनुचित है। जहां अन्याय, वहां प्रतिकार करना तथा उसका विनाश करना हमारा पवित्र कर्तव्य है। और क्या विचार करना है ?

निरंजन ने शान्ति से कहा—तुम्हारा कहना सही है। अन्याय का प्रतिकार और निवारण इस ही में मनुष्यता है इसे मैं सहर्ष मानता हूं पर इस सिद्धांत का अमल करते समय अन्य सिद्धांतों का विचार भी आवश्यक है। मानव जीवन अनेक सिद्धांतों के चक्र में चक्रित है। सारे सिद्धांतों का समुचित संबंध बनाये रखने पर ही जिवन चक्र की सुगति है।

चन्द्रकान्त—तुमने सिद्धांतों का जाल बिछाना आरंभ कर दिया। इस जाल में फंसने पर बाहर निकलना कठिन होजाता है। सारी शक्ति विचार तंतुओं को सुलझाने में ही समाप्त होजाती है। जरा जरा सी बात में और जीवन के प्रतिक्षण सिद्धांतों की दुहाई दुखदायी है। अन्याय दिखाई देता है और हमें उसका प्रतिकार करना है। यह सीधा सवाल है।

निरंजन—तुम्हारे कथन में सत्यता है। विचार जाल में फंसने की अपेक्षा उसे यदि एक बार ठीक सुलझा लिया जाय तो फिर जीवन कार्य सहल होजाता है। यह जाल हमारा बन्धन नहीं हमारा साधन बन जाता है। विचार जाल को सुलझाये बिना, इधर उधर भटकते रहने से जीवन की गति निश्चित नहीं रहती और साथ ही जीवन कार्य में निश्चलता

की दृढता भी नहीं आती। जीवन का विचार-जाल सुलझाना कठिन है तो साथही सुलझाने पर वह अत्यंत लाभदायक भी है। जिस व्यक्ति ने अपने जीवन का जाल नहीं सुलझाया है वह समाज का या विश्व का जाल किस प्रकार सुलझा सकेगा? जिसने अपनी जीवन-ग्रंथियों को खोला है वह ही अन्यों की कठिनाइयों को हल करने में सफल होने की संभावना रख सकता हैं। हम भी इस काम में थोडा समय लगादें तो हमारी हानि नहीं होगी। अभी इस समय तो हमें प्रतिकार-कार्य करना भी नहीं है। जो कुछ करना है वह प्रातःकाल ही हो सकेगा। तब इस अंधकारमय रात्रि में हर कार्य की नींव जो विचार उसका प्रकाश दर्शन करने का ही काम करलें ताकि सबेरे बाह्य और अन्तर दोनों प्रकाशों के आलोक में हमारा कार्य अधिक स्पष्ट हो।

चन्द्रकान्त—विचार जाल सुलझाना तो दूर रहा पर तुम्हारे जाल से मुक्ति कठिन है। अच्छा, तुम्हारी इच्छा पूर्ति हो जाय। कहिये क्या कहना है? कैदियों के साथ यह दुर्व्यवहार अन्याय है या नहीं?

निरंजन—यह अन्याय है, अनुचित है, पाशविकता है और तुम जो चाहो वह कठोर विशेषण लगा सकते हो। मुझे स्वीकार होगा।

चन्द्रकान्त—ठीक। अब दूसरी बात। अन्याय का प्रतिकार या निवारण मनुष्य का कर्तव्य है या नहीं?

निरंजन—यह मनुष्य का कर्तव्य है इतना ही नहीं पर इसी में हमारी मनुष्यता है।

चन्द्रकान्त जरा प्रसन्नता से—तब हमारे वाद का अन्त है। हमारा जाल सुलझ गया है। अन्याय है और उसका प्रतिकार हमारा कर्तव्य है। अब विचार किस बात का?

निरंजन शान्ति के साथ —भैया ! यह तो विचार जाल का आरंभ होगया। तुम जिसे अन्त मानते हो मैं उसे आरंभ समझता हूं।

चन्द्रकान्त आश्चर्य से— शायद वह आरंभ गर्तगमन का पहिला कदम हो। पर चलो तुम्हारे साथ किसी खाई के दर्शन भी कर आवें। तुम्हारा आरंभ किस प्रकार है।

निरंजन—मानव समाज का यदि सूक्ष्मता से और निष्पक्ष निगाह से निरीक्षण किया जाय तो हमें दिखाई देगा कि वह अनेक अन्यायों का आगर है। समाज या मानव जाति के कल्याण के नाम पर संस्थापित संस्थाएं ही अन्यायों की जडें होगयी हैं। वहां राजकीय, धार्मिक, आर्थिक, कौटुंबिक अनेक असमानतायें हैं। परतंत्रता हैं। आर्थिक शोषण है। धार्मिक दबाव या चूसना है। ऊंच नीच का व्यवहार है। धर्म-गुरुओं का आतंक है। नर्क का भय है। पाशविकता है। हिंसा का प्रगाढ़ प्रवाह है। अज्ञान और अस्वच्छता तथा रोग है। क्षुधा की पीड़ा, वस्त्र का अभाव, सड़कों पर मानव का शयन है। उदरनिर्वाह के लिए दरिद्री भिखारियों का हृदय को मसोसनेवाला दृश्य है। भैया, कहां तक कहूं! आंख उठाकर जहां देखो वहां ही किसी रुप में अन्याय तुम्हारी ओर झांकता दिखाई दे जाता है।

चन्द्रकान्त—समस्त अन्यायों का नाश हमारा कर्तव्य है।

निरंजन—यही सही है। मानवोचित पवित्र भावना की यही प्रथम आवाज है। पर–

चन्द्रकान्त—यह 'पर' क्या आगया। अन्याय स्वीकार। प्रतिकार मानवता का तकाजा। फिर ' पर ' कहां से आगया।

निरंजन जरा व्यथा से–यह 'पर' हमारी शक्ति की सीमा की रेखा है। मानव मन विशाल है। मानव कल्पना अबाधित है, पर मानव क्रिया-शक्ति सीमित है। कल्पना की विशालता, भावना–प्रवाह की तीव्रता देखकर जब मनुष्य अपनी शक्ति को निहारता है तब अपने सुंदर परों की ओर देख आनंद से नाचने वाले मोर की अपने परों को देख जो अवस्था हो सकती है, वही उसकी स्थिति होजाती है। उसकी व्यथा 'पर' इस शब्द में ध्वनित होती है। इस 'पर' ने मानव जीवन को 'बेपर' बना दिया है और उसकी उड़ान को रोक दिया है तथा उसकी सीमा का कुंपन तयार कर दिया है।

चन्द्रकान्त—बहुत लंबी व्यथा होगयी। हमें इस सब से क्या मतलब? हमें तो हमारा काम बराबर करते रहना चाहिये।

निरंजन—तुम्हारा कथन ठीक है कि हमें हमारा काम बराबर करते रहना चाहिये, परंतु बराबर का सही अर्थ समझ लेना जरूरी है।

चन्द्रकान्त जरा झुंझलाकर–निरंजन! आज अंधेरी रात में तुम्हारे मस्तिष्क में कुछ अंधेरा तो नहीं छागया। अब बराबर शब्द का भी अर्थ समझना है। हर शब्द का अर्थ समझने में ही सारी रात रवाना हो जायगी। शब्दार्थ ही हमारा जीवन कार्य होजायगा।

निरंजन—हां। जिसने शब्दों का अर्थ ठीक समझ लिया उसने जीवन का अर्थ समझ लिया। मेरा तो अनुभव है कि अनेक बार हम जिन शब्दों का प्रयोग करते हैं उनके अर्थ को ठीक समझने का प्रयत्न नहीं करते। कई शब्दों के मोह और प्रभाव से हम इतने आकर्षित होते हैं कि वे शब्द ही हमारे जीवन के मार्ग-दर्शक बन जाते हैं। शब्दों के सार की अपेक्षा उनकी ध्वनि ही हमारी भावनाओं की उत्तेजना बन जाती है और हठात् हमसे क्रिया करवा लेती है। त्याग, बलिदान, कुर्बानी, आत्म-

समर्पण, कर्तव्य, मानवता, सौंदर्य, ईश्वर, कर्म-धर्म, सत्य, समानता, नरक, स्वर्ग, अमृत, पुनर्जन्म, क्रान्ति आदि अनेक शब्द हैं जिनके अर्थ को हर मनुष्य ने ठीक नहीं समझा, या हर व्यक्ति भिन्न भिन्न अर्थ में उनका प्रयोग करता है।

चन्द्रकान्त—हम बहुत गहरे चले। हमारा आज का प्रश्न तो छोटासा है। हम उसके दायरे में ही रहें। बताओ। बराबर का क्या अर्थ है। मुझे तो उसके अर्थ के विषय में कोई कठिनाई नहीं है पर तुम्हारा अर्थ भी समझ लें।

निरंजन—मेरी दृष्टि में और हमारे वाद की सीमा में बराबर का अर्थ होगा, अपनी शक्ति, ध्येय और अधिकार के अनुसार कार्य करना। इसही के साथ समय और स्थान का विचार भी आवश्यक होजाता है। इन सारी बातों का विचार कर जो कार्य किया जाता है वह काम बराबर है, योग्य है। जिस काम में इन प्रश्नों के विचार की अवहेलना की गई है उस काम की उचितता में संदेह होसकता है।

चन्द्रकान्त—बहुत ठीक। पर जीवन के हर कार्य का इतना गहरा विचार आरंभ होजायगा तो जीवन क्रियाशील न रहकर विचारमय बन जायगा। कार्य की उचितता या अनुचितता इसके निर्णय में ही उमर पूरी हो जायगी।

निरंजन—बिना विचारे कार्य करने से तो न करना अच्छा है। विवेकहीन कृति की अपेक्षा अकृति अत्यंत श्रेयस्कर है। संसार की आज की अनेक बुराइयों की जड़ विवेक-विहीन व्यवहार ही है।

चन्द्रकान्त—यह विषय विवादात्मक है। अभी इसे छोड़ दें। आज के काम के लिए हम विचार करलें। तुम्हारी परिभाषा या कसौटी के अनुसार हम अपने कर्तव्य का निर्णय करें।

निरंजन—बिलकुल ठीक। मेरी परिभाषा के अनुसार पहिला सवाल खड़ा होता है मनुष्य की शक्ति का। मैंने यह कहा था कि समाज में अन्यायों की अनन्तता है। वहां से हम दूसरी ओर भटक गये। अन्याय विपुल हैं और मनुष्यकी शक्ति सीमित या स्वल्प। सारे अन्यायों का निवारण हर व्यक्ति की शक्ति के परे हैं। प्रत्येक अन्याय के निवारण की प्रेरणा स्वाभाविक हैं पर किस अन्याय के प्रतिकार में कितनी शक्ति लगाना इसका निर्णय मनुष्य को करना होता है। यदि सर्वव्यापी अन्यायों के प्रतिकार का काम आरंभ किया जाय तो अन्यायों की असंख्यता और शक्ति की सीमितता के कारण संघर्ष बेमेल हो जायगा। हमारा प्रतिकार कार्य निष्क्रिय और परिणामहीन होजायगा। हमारी शक्ति की सीमा के तत्व को जीवन में सदा स्वीकार करना चाहिये। आत्म-परिचय का यह आरंभिक पाठ है।

चन्द्रकान्त—अच्छा। यह स्वीकार। आगे चलिये।

निरंजन—शक्ति की सीमा ने ही, मानव जीवन में ध्येय, उद्देश्य, लक्ष्य आदि को जन्म दिया है। अपनी सीमित शक्ति को किस काम में लगाना इसका निर्णय ही ध्येय निर्णय है। संसार में अन्यायों की अनेकता है, उसी प्रकार उत्तम कार्यों की भी अनेकता। एक मनुष्य जिस प्रकार सारे अन्यायों का अन्त करने में अपने को असमर्थ पाता है, उसी प्रकार सारे उत्तम कार्यों को करना भी उसकी शक्ति के परे है। अतः वह जीवन में निश्चित करता है कि जीवन किन सत्कार्यों में लगाया जाय और किन अन्यायों के विनाश में शक्ति का विनियोग किया जाय। ध्येय निश्चित कर उसकी प्राप्ति में अपने जीवन की सारी शक्ति को समर्पित कर देना यही जीवन सफलता है, चाहे कार्य सफल हो या न हो। जीवन-सफलता मनुष्य के आधीन है, कार्य-सफलता परिस्थिति के स्वाधीन। ध्येय की स्वतंत्रता में मनुष्य की स्वतंत्रता है, और परिणाम की परवशता में

मनुष्य की परतंत्रता। इस प्रकार मनुष्य जीवन स्वावलंबन और परावलंबन का मिश्रण है।

चन्द्रकान्त—यह भी कुछ अंश में स्वीकार है। आगे चलिए।

निरंजन—पहिले इन दो बातों को लेकर हम हमारी आज की कृति का विचार करलें। फिर अन्य बातों का विचार करें।

चन्द्रकान्त—अच्छा।

निरंजन—हमारी शक्ति सीमित है और उसके अनुसार हमने हमारे जीवन का एक ध्येय बनाया है कि इस देश की राजकीय परतंत्रता निवारण में हमारे जिवन की शक्ति का उपयोग किया जाय। क्यों यह ठीक हैं ना?

चन्द्रकान्त—राजकीय स्वतंत्रता हमारा ध्येय है पर ध्येय में भी प्रधान और गौण इस प्रकार भेद होजाते हैं। राजकीय स्वतंत्रता हमारा प्रधान ध्येय है तो साथ ही अनेक गौण ध्येय भी जीवन में विद्यमान हैं।

निरंजन—यह स्वीकार हैं। जिवन का प्रधान ध्येय प्रायः एक होता है और अनेक गौण ध्येय उसके पोषक रहते हैं। प्रधान और गौण ध्येय में परस्पर पोषकता होनी चाहिये न कि विरोध। कारण पोषकता में जविन प्रवाह की गति है और विरोध में अवरोध।

चन्द्रकान्त—इस तत्व के अनुसार कहा जाय तो मैं कह सकता हूं कि राजकीय आजादी हमारा प्रधान ध्येय हैं और जेल सुधार उसके पोषण का हमारा गौण ध्येय।

निरंजन—स्थूल रुप से यह कहा जा सकता हैं पर जरा बारीकी से विचार करेंगे तो स्वीकार करना होगा कि सर्वसाधारण जेल सुधार से और राजकीय स्वतंत्रता प्राप्ति से कोई सीधा संबंध नहीं है।

चन्द्रकान्त—क्यों नहीं ? अहिंसा के मार्ग से यदि स्वराज्य प्राप्त करना हैं तो जेलखानों का सुधार अत्यंत जरूरी है ।

निरंजन—इस प्रश्न को लेकर हमने कैदियों में भेद किया है। जेलखानों के दो हिस्से किये हैं। राजकीय कैदी और साधारण कैदी। राजकीय कैदियों की अवस्था सुधार की ओर हमारा कुछ लक्ष्य भी गया है। कुछ प्रयत्न भी हुआ है। आज तो हमारे सामने सवाल है, साधारण अपराधी कैदियों का।

चद्रकान्त जरा उत्तेजना से—तो क्या इन बिचारे कैदियों की यातना तुम्हें द्रवित नहीं करती ? इनका कोई वाली नहीं ? सर्व साधारण जेलखाने इसी प्रकार चलने दिये जाय ? इनके सुधार की आवश्यकता नहीं है ?

निरंजन व्यथित आवाज में— भैया ! मैंने यह कब कहा। मैं जेलखानों में सुधार चाहता हूं। इतना ही नहीं, मैं हृदय से उनका विनाश चाहता हूं। विश्व-सृष्टि में नर्क है या नहीं इसका मुझे पता नहीं पर मानव सृष्टि में भारत के आज के बन्दीगृह नर्कालय है। यमदूतों का शायद इतना भय और आतंक नहीं होगा जितना जेल के दूतों का है। मुझ में शक्ति हो, मैं अपनी कल्पना के अनुसार समाज रचना कर सकूं,-तो मैं वर्तमान कारागृहों की नींव तक न रहने दूं। जेल में मनुष्य, मनुष्य के साथ जो व्यवहार करता है, अपने समान मनुष्य को फांसी पर तक लटका देता है, सारी बातें सुन तथा देख मेरा हृदय अत्यंत पीडित है। कितनी बार मेरे हृदय को जहर पीना पडा है।

चन्द्रकान्त—क्यों ? जहर क्यों पिया ?

निरंजन—हां ! अनेक बार भावना की अलग पुकार रहती है और विवेक का भिन्न मार्गदर्शन। भावना अन्याय के प्रतिकार की प्रवृति को जगाती है पर कार्य का निश्चय विवेक के आधीन है। इस ही कारण मैंने ही नहीं, जीवन के अन्य क्षेत्रों को छोड जेल–खाने की बातें ही करूं तो, कह सकता हूं कि हमने सबने सब्र का विषपान किया है।

चन्द्रकान्त—हमने नहीं किया। मैं इसे स्वीकार नहीं करता।

निरंजन—जरा उत्तेजना को छोडकर विचार करो। तुम हम दोनों इस आन्दोलन के आरंभ में सेन्ट्रल जेल में थे। उस समय राजबंदियों के साथ भी जो व्यवहार किये गये उन्हें क्या हम जीवन में विस्मरण कर सकते हैं ! हमारे साथियों को फटके लगाये गये। लाठी चार्ज हुआ। गुनाहखाने की सजायें हुई और कितने अनुचित व्यवहार हुये। फांसी तक हमारे सामने दी गयी। अन्य जेलोंके समाचार भी हमने सुने। अत्याचारों की कोई सीमा। हमारे अपने देश में, अपनी मातृभूमि की स्वतंत्रता प्राप्त करनेवालों की यह अवस्था ! पर भैया ! हमने सबने इन अन्यायों के जहर को कठोर हृदय कर, निद्रा को त्याग, पीने का काम किया है।

चन्द्रकान्त—तुमने किन घटनाओं का स्मरण करा दिया। मेरा हृदय उनके स्मरण मात्र से कांपता है।

निरंजन—भैया ! कष्ट न करो। व्यथा प्रतिकार की शक्ति को क्षीण बना देती है। व्यथा का ज्ञान और मन की व्यवस्थित अवस्था ही प्रतिकार की सर्व श्रेष्ठ शक्ति को पैदा कर सकती है। पर चन्द्रकान्त। हमने इससे भी अधिक भयानक विष पिया है। सारे भारतवर्ष ने पिया है।

चंद्रकान्त—वह किस प्रकार ?

निरंजन—राजकीय परतंत्रता का विष तो पिया ही है पर कुछ वर्ष पहिले जब भगतसिंह को फांसीपर लटकाया गया उस अवस्था को मै किस प्रकार भूल सकता हूं। भगतसिंह की नीति से चाहे हम सहमत न हो पर उसका हमारा एक ध्येय था। हर भारतीय के हृदय का वही ध्येय था। भारत की पैंतीस करोड जनता ने भगतसिंह को फांसी न देने की एकमुखी अपील की पर अंग्रेजी राज्य ने एक न सुनी। भगतसिंह को अमरत्व के तक्त पर सुलाया गया और हम सब हमारी असहायता का कटु विष पिकर रह गये। मनुष्य के और समाज के जीवन में इस प्रकार के अवसर आते हैं जब उसे जहर निगल कर शान्ति धारण करना होता है और अन्याय निवारण के लिए बल प्राप्त करने के काम में जुट जाना होता है। चंद्रकान्त! हम फिर भटक गये। अपने वाद के दायरे में आना चाहिये।

चंद्रकान्त—जरासे सवाल से हमने आरंभ किया और कहा चले जा रहे हैं। निरंजन! यदि इस वाद का अर्थ इस प्रकार की घटनाओं का और भयंकरताका प्रतिक्षण निर्माण करना है तो मुझे यह वाद नहीं चाहिये। शान्ति से सोने के स्थानपर आजकी सारी रातका सत्यानाश हो जायगा।

निरंजन—नहीं! यह हम न होने देंगे। हम अपने स्थान पर आवें।

चंद्रकान्त—अच्छा हमने हमारा वाद सुत्र कहां छोडा था।

निरंजन—हम जीवन के प्रधान और गौण ध्येय तथा जेलखानों के सुधार की चर्चा कर रहे थे।

चन्द्रकान्त—हां! ठीक। जेलखानों का सुधार हमारा गौण ध्येय है यह मेरा कहना था।

निरंजन—मैंने कहा ही है कि हमने जेलखानों के दो विभाग कर दिये हैं। राजकीय बन्दीवास और साधारण जेलखाना। राजकीय बन्दियों का प्रश्न हम अलग करदें तो यह कहा जासकता है कि सर्वसाधारण जेलखानों का सुधार यह प्रश्न राजकीय स्वतंत्रता प्राप्ति के निकट के कारणों के दायरे में नहीं आता।

चन्द्रकान्त—क्यों नहीं ? राजकीय स्वतंत्रता में सारे प्रश्न आते हैं। हमारी राजकीय स्वतंत्रता रामराज्य होगी।

निरंजन—फिर हमें थोडा भेद करना होगा। राजकीय स्वतंत्रता का प्रथम हिस्सा हैं उसकी प्राप्ति और दूसरा हिस्सा है उसकी व्यवस्था या उपभोग। आज हम प्रथम काम में लगें हैं। सर्वसाधारण जेलखानों का सुधार राजकीय स्वतंत्रता प्राप्ति के प्रयास के लिये आवश्यकीय वस्तु नहीं है। वह स्वतंत्रता प्राप्ति के अनंतर की अवस्था है।

चन्द्रकान्त—क्यों भला ?

निरंजन—कारण उस सुधार पर स्वतंत्रता प्राप्ति अवलंबित नहीं है। जेलखाने इसी प्रकार के होते हुये भी देश की आजादी प्राप्त की जासकती है। आजकी अपेक्षा बुरे जेलखानों का भी राजकीय बंदियों ने अनुभव किया है।

चन्द्रकान्त—यह बात मन मंजूर नहीं करता।

निरंजन—मन की मंजूरी का प्रश्न नहीं है। यह व्यवहार्य बात है।

चंद्रकान्त—किस प्रकार ?

निरंजन—विशेष विस्तार में न जा मै तुम्हारा लक्ष्य अपने विधायक कार्यक्रम की ओर आकृष्ट करना चाहता हूं। अपना सारा

विधायक कार्यक्रम स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए जरूरी है, यह अपनी मान्यता है।

चन्द्रकान्त—हां यह ठीक है।

निरंजन—तब तुम देख सकते हो कि अनेक शीर्षकों के नीचे विस्तृत किये अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में जेल सुधार का समावेश नहीं है। सर्वसाधारण तथा कॉंग्रेस की निगाह में आज जेल का सुधार स्वराज्य प्राप्ति के प्रयत्नों में या उसके लिए की जानेवाली तैयारी में नहीं आता है।

चन्द्रकान्त—विधायक कार्यक्रम की फेहरिश्त में न हो पर हम हरबार जेल में इसकी ओर ध्यान देते आये हैं। यतिंद्रनाथदास ने तो इस प्रश्न को लेकर अपना जीवन बलिदान ही कर दिया। इसका ही फल है कि आज हम ए. बी. क्लास का आराम भोग रहें है।

निरंजन—तुमने दो प्रश्न पैदा कर दिये। हर बार हमारा प्रयत्न और यतिंद्रनाथ का हृदयग्राही सफल बलिदान।

चन्द्रकान्त—हमारे वाद के लिए दोनों प्रश्न अत्यंत आवश्यक हैं

निरंजन—इन पर जरा विचार करलें। पहिला प्रश्न हमारा प्रयत्न।

चन्द्रकान्त—हां।

निरंजन—हमारा हर जेल के समय का टूटा फूटा प्रयत्न कुछ विशेष महत्व नहीं रखता।

चन्द्रकान्त—क्यों भला?

निरंजन—कारण हमारे प्रयत्न निश्चित दिशासे तथा निर्धारित योजना–नुसार नहीं है। साथ ही सारे जेलों में हमारी सुधार योजना की तथा प्रयत्नों की समानता भी नहीं रही।

चन्द्रकान्त--इस कार्य ने व्यापक, निश्चित और सामुदायिक स्वरुप धारण न किया हो पर व्यक्ति के नाते इस दिशा में बराबर प्रयत्न हुये है। कहीं कहीं सामुदायिक भी।

निरंजन—इन सारे प्रयत्नों को क्षणिक तथा स्थानीय मानता हूं। इनकी तुलना कुछ अंश में श्मशान वैराग्य से हो सकती है।

चन्द्रकान्त—याने?

निरंजन—जिस प्रकार मनुष्य श्मशान में जाता है, लाश को जलते देखता है, अपने भी इसी प्रकार के भविष्य की कल्पना करता है तब उसके हृदय में जीवन के वैराग्य की, जीवन की नश्वरता की भावना जागृत होती है और साथ ही अन्यायों से परावृत्त होने की इच्छा भी पैदा होती है। श्मशान त्याग घर आने पर धीरे धीरे वह भावना नष्ट होजाती है। मनुष्य अपने जीवन कार्य में पुनः लग जाता है। उसी प्रकार हमारा प्रयत्न जेल वैराग्य है। उसमें स्थायीत्व नहीं। जब हम जेलखानें में आते है, अपने सामने कैदियों के साथ किये दुर्व्यवहार को देखते या सुनते हैं तब हमारी मनुष्यतापर आघात होता है, उसको बन्द करनेकी प्रेरणा पैदा होती है। कभी कभी भावना के जोशका समुद्र उमडकर गर्जन कर जाता है। कुछ प्रयत्न भी होजाता है। हम कुछ कष्ट भी सहन कर जाते है, पर जेल के फाटक के बाहर होते ही इन बिचारे दुखी प्राणियों का हमे विस्मरण होजाता है। मुझे स्मरण नहीं कि किसी भी राजकीय व्यक्ति ने जेल के बाहर निकलने पर इस प्रश्न पर गंभिरता से विचार, प्रचार और प्रयत्न किया हो। हर बार

स्मशान में वैराग्य की उत्पत्ति, उसी प्रकार हर बार जेल में इन पीडितों की अल्प दया। क्यों चंद्रकान्त ! श्मशान और कारावास वैराग्य में कुछ समानता है ?

चन्द्रकान्त—हां कुछ अंश में सही है। पर उसका कारण है कि बाहर जाने पर बडे कामों में लगजाना होता है। यह गौण काम रह जाता है।

निरंजन—यह मान लिया जाय तब भी यह तो मानना होगा कि इस गौण काम का हमारे जीवन में सतत अस्तित्व नहीं है। यह स्थानीय और तत्सामयिक काम है। इसके अभाव में हमारा प्रधान कार्य चल सकता है। तब यह कार्य हमारे ध्येय का निकट पोषक कार्य नहीं है।

चन्द्रकान्त—यह भले ही कह दें परंतु साथ में समय और स्थान के अनुसार हमारे लिए छोटे बडे कर्तव्योंका निर्माण होता है और हमारा काम है कि हम उनकी ओर भी ध्यान दें। प्रधान ध्येय की या मनुष्यताकी पूर्ति तो हर क्षण और हर स्थान में पैदा होनेवाली परिस्थिति में योग्य व्यवहार करनेंमें ही है। यदि हम भविष्य के लिए वर्तमान की उपेक्षा करते रहे तो जीवन निकृष्ट होजायगा। आज हम जेल में है तब यहां की परिस्थिति के अनुसार कर्तव्य का पालन करना ही चाहिये।

निरंजन—इस कथन में सार है। इसका विचार हम मेरी कसौटी के अनुसार समय, स्थान, अधिकार आदि बातों का विचार करेंगे, उसके साथ करना उचित होगा। पहिले तुम्हारे दूसरे प्रश्न का याने यतिंद्रनाथदास के बलिदान का विचार करलें।

चन्द्रकान्त—हां, उस विचार में यह प्रश्न आजायगा। दास ने जेल सुधार के लिए अपने प्राणों की आहुति दे दी। तुम कहते हो हमने इस दिशा में काम नहीं किया पर दास के आत्मसमर्पण को किस प्रकार भुलाया जासकता है।

निरंजन—दास के बलिदान को कौन भारतीय भूल सकता है। उसका बलिदान अन्य प्रश्न को लेकर था। और वह कार्य उसका प्रधान ध्येय बन गया था।

चन्द्रकान्त—याने ?

निरंजन—जेल जाते समय दास का प्रधान ध्येय भिन्न था। जेल में वहां की परिस्थिति ने दास के जीवन में नवीन प्रधान ध्येय निर्माण कर दिया। उस ध्येय की प्राप्ति के लिए उसने अपने जीवन की बाजी लगादी। जीवन में ऐसे अवसर आते हैं, जब हमारे गौण ध्येय प्रधान बन जाते हैं और छोटी बात बडी बन जाती है। हमारी मनुष्यता का तकाजा या हमारा स्वाभिमान इस प्रकार के सामयिक परिवर्तन कर देता है।

चन्द्रकान्त—इस प्रकार के परिवर्तन उचित है या नहीं ?

निरंजन—यह बात परिस्थिति तथा हमारी मनोवृत्ति दोनों पर निर्भर है। इसके विषय में निश्चित सिद्धांत का प्रतिपादन करना कठिन है।

चन्द्रकान्त—पर दास का कार्य उचित था—यह तो स्वीकार करोगे ना ?

निरंजन—बिलकुल स्वीकार। सिर झुकाकर स्वीकार।

चन्द्रकान्त— अच्छा ! उसका ध्येय क्या था ? जेल सुधार तो था ही ?

निरंजन — जेल सुधार व्यापक क्षेत्र है। दास की मांग इतनी व्यापक नहीं थी। उसकी निश्चित और एक ही मांग थी।

चन्द्रकान्त — कौन सी ?

निरंजन—जेल में अंग्रेज हिंदुस्थानी यह भेद न किया जाय। एक ही अपराध में आये समान सामाजिक स्थिति के अंग्रेज और हिन्दुस्थानी के साथ भिन्न व्यवहार था। दास की आत्मा जेल में भी इस भिन्नता को बर्दाश्त न कर सकी और उसने इस मांम की प्राप्ति के लिए सारी शक्ती लगादी। जेल में मनुष्यता का व्यवहार हो यह उसकी मांग नहीं थी। उसकी मांग थी, समानता की। अंग्रेज और हिन्दुस्थानी के साथ समान व्यवहार हो। यदि किसी अपराध के लिए अंग्रेज को जेल में फटके लगाये जासकते है तो वही व्यवहार हिन्दुस्थानी के साथ हो तो दासकी मांग में आपति नहीं थी परंतु हिन्दुस्थानी को फटके-मार या अन्य हीन व्यवहार और अंग्रेज को नहीं यह दास को मान्य नहीं था। इस निश्चित बात को लेकर उसने उपवास किया और ३५ करोड भारतियों के जीवित रहते वह अमरत्व में मिल गया।

चन्द्रकान्त—अपना कार्य भी सफल कर गया।

निरंजन—कार्य सफल हुआ पर उसके अन्त के पश्चात ! दास अपने जीवन में अपने ध्येय की साध्यता नहीं देख सका। भैया चंद्रकान्त ! दास अपनी जीवन सफलता का अनुभव कर सका। जीवन की सफलता कार्य की सफलता पर निर्भर नहीं है। अपने ध्येय प्राप्ति के लिए अपनी सारी शक्ती का समर्पण कर देना इसमें ही जीवन सफलता

है। दास ने यही कार्य किया। उसने जीवन पर विजय पायी और जीवन विजय के पश्चात उसके कार्यकी भी विजय हुई! जिसका लाभ आज हमें मिल रहा है।

चन्द्कान्त—निरंजन वाद की बात तो नहीं, पर मानव जीवन में यह सब क्या है।

निरंजन—महानों की महान शक्ति का प्रदर्शन और साधारण जनों का लाभ।

चन्द्रकान्त—दास ने इतने बडे अन्याय को दूर किया। जेल में जो ये दुर्व्यवहार रुपी छोटे छोटे अन्याय होते है क्या हम उनका भी निवारण नहीं कर सकते? क्या हम इतने निर्बल हैं?

निरंजन—हमारी निर्बलता या सबलता का निर्णय कटिन है। इस प्रश्न को छोडकर इतना अवश्य कहा जासकता है कि हमने किसी ने इस प्रश्न को अपने जीवनका लक्श्य नहीं बनाया हैं। लक्ष्य की तीव्रतके अभाव में शक्तिका अभाव दिखाई देता है। हम यदि इसी प्रश्न को प्रधान लक्श्य बनाकर अपनी सारी शक्ति उस काम में लगाने का निश्चय करलें तो हम अभी बलवान बन जायेंगे।

चन्द्रकांत—तो हम क्यों न यही निश्चय करें और अपनी शक्ति का उपयोग करें।

निरंजन—यह हरएक व्यक्ति का अपना सवाल है। यदि किसी को यह प्रश्न अत्यंत महत्वका प्रतीत हो और उसे अपना ध्येय बनाकर अपनी सारी शक्ति लगा दे तो मैं उसका आदर अवश्य करूंगा।

चन्द्रकांत—तुम क्यों नही इस काम को अपनाते ? एक बडा काम होगा।

निरंजन—यह तुम्हारी कृपा है पर मैं अपने में इस काम में जुटने की प्रेरणा नहीं पाता। जिस कामको मैं आज कर रहा हूं, उसकी सफलता में इन छोटे कामों की सफलता निश्चित है। विशाल राजकीय ध्येय की प्राप्ति के साथ इन कामों को करने की शक्ति पैदा होनेवाली है। महान वस्तु की प्राप्ती में लगे हुये व्यक्तियों को कई वार तत्क्षणीय मामूली अन्यायों की उपेक्षा करना आवश्यक होजाता है।

चन्द्रकांत—तब क्या हम अपनी आखों के सामने होनेवाले इन अत्याचारों को मूक निर्बल होकर भविष्य की आशा के प्रकाश में देखते रहेंगे ! निरंजन ! तब तो जीवन व्यर्थ है। तुम्हारा सारा विचार व्याप और उसकी गहराई निरर्थक है। हर परिस्थिति में अन्याय के प्रतिकार का मार्ग जो विवेक नहीं बताता वह विवेक व्यर्थ है। निर्बल है। त्याज्य है।

निरंजन—बिलकुल ठीक है। वही सच्चा और श्रेष्ठ विवेक है जो सदा सर्वत्र मार्गदर्शक है। उसके मार्ग का अनुसरण बल प्रदर्शन है, कृति है ! कृति-हीन विवेक, शरीरहीन आत्मा है। मानव जीवन कृति है और बल है, पर बल प्रदर्शन विभिन्न प्रकार से होसकता है। बल प्रदर्शन कृति में है, वाणी में है, शान्ति में है, त्याग में है, और है निर्भयता में भी। किस परिस्थिति में कैसा व्यवहार किया जाय इसका निर्णय करना विवेक का क्षेत्र है और उसके अनुसार की हुई कृति बलवान कृति है। कभी कभी व्यावहारिक निगाह में विवेक-मय कृति बलवान दिखाई न देती हो। क्रिया की अपेक्षा कभी कभी निष्क्रियता में अधिक बल की जरूरत होती है।

चन्द्रकान्त—हम बहुत गहरे जा रहे है। हमारे विचार क्लिष्ट से बनते जारहे हैं। जरा व्यावहारिक क्षेत्र में रह कर ही विचार करलें। मैं जानना चाहता हूं कि इन अत्याचारों के निवारण का हमारे पास कोई उपाय है या नहीं? तुम्हारे ऊपर के कथन के अनुसार निष्कृति में ही हमें अपना बल मानकर अपने आपको धोका देते रहना चाहिये।

निरंजन—विवेकपूर्ण व्यवहार चाहे वह कृति हो या मौन आत्मवंचना नहीं है। कभी कभी तो मौन व्यवहार के लिए दुनिया के आक्षेप और निन्दा सहन करनी होती है।

चन्द्रकान्त—अच्छा पर यह तो बताओ कि तुम्हारे विवेक वनमें हमारे लिए कोई मार्ग है या नहीं? हमने कहां से विचार आरंभ किया और कहां चले गये। समय भी दौड रहा है। निद्रा भी नजदीक से झांक रही है। हम अभी विचार प्रवाह के मध्य में पडे है। कही किनारा दिखाई देता ही नहीं। इस समुद्र मंथन से या उसकी तह देखने की अपेक्षा उसकी लहरों के साथ तैरते रहना अच्छा है। बताओ है कोई पैल तीर पहुंचने का तरीका?

निरंजन—क्यो नहीं? अवश्य है।

चन्द्रकान्त—तो वह बताओ।

निरंजन—सर्व साधारण जनों द्वारा अन्याय निवारण के मार्गों का जब मैं स्थूल रुपसे विभक्तिकरण करता हूं तो तीन रुपों में उन्हें देखता हूं।

चन्द्रकान्त—किस प्रकार?

निरंजन—क्रोधमय शाब्दिक प्रतिकार, व्यथामय विवेकपूर्ण नैतिक प्रतिकार और तीसरा अपनी शक्ति का प्रयोग।

चन्द्रकान्त—जरा स्पष्टिकरण करो।

निरंजन—हर अन्याय को देख संताप आना स्वाभाविक ही नहीं आवश्यक है। यह भावनामय अवस्था है। अन्याय को देख भावना जागृत होती है। दया आदि अनेक मनोविकार पैदा होते हैं और प्रायः क्रोध का प्रादुर्भाव होजाता है। मनुष्य शब्दों में उसका प्रतिकार करता है। परिणाम का वह विशेष विचार नहीं करता। भावना की शीघ्र जागृति, तत्क्षण क्रोध का प्रगट होना, वाणी का प्रवाह, कभी कभी शरीर बल का उपयोग भी और तत्पश्चात् शान्ति भी। अन्याय का सदा के लिए अन्त हो इस का विचार वहां नहीं रहता। इस प्रकार के प्रतिकार में अन्याय निवारण की अपेक्षा निज की भावना शान्ति का कार्य अधिक होता है। इस प्रथा का हमारे साथी जेलमें अनेक बार प्रयोग करते दिखाई देते हैं और इसी में अपने मन को शान्ति देते हैं। विस्मृति भावना को शान्त कर देती हैं और जिवन में क्रिया का आरंभ नहीं होता। यह एक मार्ग है।

चन्द्रकान्त—और दूसरा ?

निरंजन—दूसरा मार्ग है नैतिक प्रतिकार। किसी अन्यायको देखकर व्यथा पैदा होती है। उसके निवारण की इच्छा उत्पन्न होती है। तब अपने अधिकार के दायरे में रहकर अन्याय के स्थायी निवारण का प्रयत्न करना। अन्यायी के हृदय को परिवार्तित करने का, उसकी मनुष्यता को जगाने का जो प्रयत्न होता है, वह है नैतिक प्रतिकार का मार्ग।

चन्द्रकान्त—और तीसरा ?

निरंजन—किसी अन्याय के निवारण की प्रेरणा या उत्कटता इतनी तेज होती है कि मनुष्य अपनी समस्त शक्तियों का उपयोग उस काम के लिए करता है। शक्ति का यह विनियोग निवारण की उत्कटता के प्रमाण में रहता है। दास की उत्कटता इतनी विशाल थी कि उसने अपना जीवन तक उस कार्य की कीमत में दे दिया। ऐसे भी उदाहरण होते है जहां कम अधिक शक्ति का उपयोग किया जाता है और सफलता मिले या न मिले उसमें संतोष मानकर अपने कार्य की समाप्ति मानली जाती है। राजकीय स्वतंत्रता प्राप्ति में भी हम देखते हैं कि कुछ व्यक्ति अपना सारा जीवन इस कार्य में लगा देते हैं, कई अपनी थोडी शक्ति सतत प्रदान करते है, कई थोडी देकर फिर रह जाते हैं। शक्ति के इस विनियोग भेद से ही मानव की महानता का भेद है। अपने नियोजित कार्य में शक्ति का जितना विनियोग उतनी ही उसकी महानता। चन्द्रकांत ! संक्षेप में हमने तीनों मार्गोंका अवलोकन किया। तुम्हे हर्ज न हो तो इनका परिणाम या कर्ता की मानसिक अवस्था का भी दर्शन करलें।

चन्द्रकांत—मैं खींचतानकर गहराइसे उपर लाना चाहता हूं और तुम घूम फिर उधर ही घसीट लेजाते हो।

निरंजन—भैया ! तुम्हारा कथन किसी अंश में सही है पर हमने जिस प्रकार इस प्रश्न को देखना आरंभ किया, जीवन कार्यसे उसका जिस तरह संबंध आगया, उस कारण यह सब देखना आवश्यक होगया है। हमारा समय निरुपयोगी नहीं जायगा। अंत में लाभ ही होगा। जीवनकी हर अवस्था में व्यावहारिक कर्तव्य की चाबी हमें हासिल होजायगी। मैंनें स्वयं आजतक इस प्रश्न की ओर इतनी गहराई से नहीं देखा था। आज

तुम्हारे साथ चर्चा चल पडी और हम उसका जरा सुक्ष्म विवेचन करने लग गये। यदि और गहराई में जाय तो न मालूम कितना मंथन करना पडे। हम तो अभी उपरीतल के निचे के विभाग में ही विहार कर रहे हैं।

चन्द्रकांत—अच्छा यह विचार भी करलें।

निरंजन—बडी कृपा।

चन्द्रकांत—तो पहिला मार्ग शाब्दिक प्रतिकार।

निरंजन—परिणाम के विचार के दो क्षेत्र होजायेंगे।

चन्द्रकांत—फिर विभक्तिकरण आरंभ हुआ। अच्छा कहिये कौन से दो क्षेत्र।

निरंजन—एक हर अवस्था में सर्व साधारण परिणाम और दुसरा भिन्न परिस्थिति के अनुसार परिणाम या प्रभाव।

चन्द्रकांत—अच्छा प्रथम अवस्था।

निरंजन—क्रोधमय शाब्दिक प्रतिकार। इसका कर्तापर अच्छा परिणाम नहीं होता। वह अपने क्रोध का संवरण नहीं कर सकता और उस आवेग में भाषापर भी नियंत्रण नहीं रख सकता। मनुष्य का यह सभ्य और संस्कृत स्वरुप नहीं है। जिसके प्रति क्रोध का प्रदर्शन किया जाता है, उसमें प्रतिकार की भावना जागृत होती है और कर्ता के प्रति उसके मन में असंतोष पैदा होता है। इसका व्यावहारिक परिणाम जिसके प्रति क्रोध किया जाता है उसकी शक्तिपर निर्भर रहता है।

चन्द्रकांत—याने ?

निरंजन—उसमें शक्ति होगी वह आपको उत्तर देगा। आपका प्रतिकार करेगा। शक्ति नहीं होगी शान्त रह जायगा। पर आपकी बात का उस पर अच्छा परिणाम नहीं होगा। चाहे भय के कारण या चतुराई के कारण वह उस काम को फिर न करें। यह भी हो सकता है कि उसका कार्य आपकी आखों से ओझल होना आरंभ होजाय। यह सब हम जेल में देखते हैं।

चन्द्रकान्त—किस प्रकार ?

निरंजन—हमारे साथियों ने इस या अन्य प्रश्न को लेकर कई बार वार्डरों को भला बुरा कहा है। कई वार्डरों ने वापिस उत्तर देकर अल्पसा अपमान भी किया हैं। कई बार वे मौन सुन गये है। जेल अधिकारियों को भी कहा गया हैं। उन्होंने भला बुरा झूट सच जवाब दिया है। कई बार मौन रह कर हंसकर टाला हैं और अपनी व्यवहार चतुरता का परिचय दिया है। मैंने यह भी देखा है कि हमारे सामने से हटकर एकान्त में यह काम हुये है और जिस कैदी ने हमसे शिकायत की उसकी ठीक मरम्मत भी हुई है। बुराई का निवारण न होकर वह गहराई में गयी है। हमारी आजतक की इस प्रणाली का यह परिणाम है। बुराई विद्यमान है और जेल वार्डर तथा अधिकारियों की निगाह में हमारा अच्छा स्थान नहीं रहा।

चन्द्रकान्त—अच्छा यह तो कुछ अंश में सही है। दूसरी पद्धति ?

निरंजन—दूसरी पद्धति है नैतिक प्रभाव या हृदय पर असर। इस प्रथा का अवलंबनकर्ता जब अन्याय से व्यथित होता है तब भी वह अपने क्रोध को काबू में रखता है। अपनी शान्ति को विचलित नहीं

होने देता। अपनी सभ्यता और मानवता की उच्च मर्यादा को कायम रखता है। अन्यायकर्ता को समझाने का, उसके हृदय को हिलाने का, उसकी मानवता को जगाने का प्रयत्न करता है और इससे जो परिणाम होजाय उससे संतोष मानता है।

चन्द्रकान्त—यह कायरता का मार्ग है। हमारी निर्बलता का द्योतक है कि हम कार्य की सफलता या अन्याय के निवारण के अभाव में संतोष मान लें।

निरंजन—नहीं चन्द्रकान्त! यह हमारी निर्बलता का परिणाम नहीं पर हमारी शक्ति की सीमा का ज्ञान है। मनुष्य अपनी शक्ति की सीमा में ही सफल कार्य कर सकता है।

चंद्रकान्त—यह शब्द छल है। मैंने निर्बलता कहा तुमने उसे सुंदर नाम दे दिया, "शक्ति की सीमा का ज्ञान"। दोनों में कोई अन्तर नहीं। शक्ति की अल्पता ही निर्बलता या कायरता है।

निरंजन—नहीं भैया। कायरता और शक्ति की सीमा व्यवहार में दो भिन्न अवस्थायें है। एक निन्दनीय है दूसरी सराहनीय।

चंद्रकान्त—मैं इसे नहीं मानता। जरा अपना अर्थ स्पष्ट करो।

निरंजन—देखो एक उदाहरण लो।

चंद्रकान्त—कौनसा?

निरंजन—एक चालीस पचास फीट खड्डा है। किसीने मुझ से कहा कि इसके इस पार से उस पार कुद जावो। मैंने अपनी शक्ति की सीमा के ज्ञान से देखा, कि मैं इस काम को करने के लिए असमर्थ हूं और कूदनेसे

इन्कार किया। मैं कायर या दुर्बल नहीं। पर तीन फूट चौडा खड्डा है। कूदने के लिए कहा गया। हर मनुष्य साधारणतः इतनी चौडाई लांघ सकता है। परंतु आत्म विश्वास के अभाव से कहीं खड्डे में गिर न जाऊं इस शंका से मैं तीन फूट भी कूदने से इन्कार करूं; यह निर्बलता या कायरता है। हम नदी किनारे पहुंच जाय। नदी पूर से भरी बह रही है। मुझे पार जाने को कहा जाय। तैरना आता नहीं और आता है तब भी बहुत थोडा। इस स्थिति में अपनी शक्ति को समझ मैं नदी में न कूदूं तो कायर हूं ? तैरना न आते हुये दो फीट पानी मे पैर रखते हुये, आत्म विश्वास के अभाव में मैं डरुं तो मैं कायर हूं। आग लाकर सामने रखदी जाय। मुझे हाथ में लेने को कहा जाय, तार के झूले पर से दौडने की आज्ञा दी जाय, दो सेर गरीष्ठ पकवान खाने का आग्रह किया जाय और यदि मैं इन कामों को करने की अपनी शाक्ति को जानता हुआ शांति के साथ इन्कार करूं तो कायर नहीं। कायरता में मन में भय रहता है। शक्ति के ज्ञान के कारण कार्य का अभाव या अल्प कृति कायरता नहीं। शक्ति खर्च करने की अनिच्छा तथा जो शक्ति है उसके विनियोग में भय यह कायरता है। प्रथम कृति में ज्ञानमय निर्भयता है। दूसरी में मन की भयावृत्त अवस्था।

चन्द्रकान्त—मतलब यह है कि मृत्यु का या कष्ट का भय है। इस संसार में साहस या वीरता के अभाव में कोई कार्य हांसिल नहीं हुआ है।

निरंजन—जीवन में साहस के स्थान को मै मानता हूं पर मैं निरर्थक और पर प्रेरित मृत्यु का पक्षपाती नहीं। सार्थक, सहर्ष और स्वप्रेरित मृत्यु का मै भक्त हूं। हमारा मृत्यु जिस प्रमाण में सार्थक, सहर्ष और स्वप्रेरित होता है, उसी प्रमाण में संसार पर उसका प्रभाव

पड़ता है। चन्द्रकान्त। हमें भावना वश नहीं मरना है। समझबुझ कर हमारे मुल्यवान जीवन का होम करना है।

चन्द्रकान्त—अच्छा, फिर हम जरा भटक गये।

निरंजन—इस प्रकार के वाद में जरा इधर उधर भ्रमण स्वाभाविक होजाता है। पर हम वापिस अपने स्थानपर आवे। हम दूसरी पद्धति का विचार कर रहे थे। नैतिक प्रभाव उसकी प्रणाली है, यह हम देख चुके। अब उसका परिणाम देखें।

चन्द्रकान्त—अच्छा चालिये।

निरंजन—अवलंबनकर्ता पर इस प्रणाली का अच्छा परिणाम होता है। क्रोधादि हानिकर मनोवेगों के आक्रमण से वह अपने आपको बचा लेता है। अन्यों से अपने अपमान की संभावना का जन्म ही नहीं होने देता। जिसके प्रति उपयोग किया जाता है, उसको वह अपना शत्रु नहीं बनाता। कम अधिक प्रमाण से उसके हृदय पर असर पैदा कर देता है और उसके हृदय में लज्जा का भाव पैदा कर देता है।

चन्द्रकान्त—पर इससे अन्याय का निवारण नहीं होगा। संभवतः आपके प्रभाव में आकर न करना स्वीकार भी करले तब भी इन कार्योंको भितर भितर करता रहेगा। इससे बुराई का नाश नहीं होगा। वह गहराई में जाने की संभावना रहेगी। प्रथम और यह द्वितीय समान है।

निरंजन--नहीं प्रथम में और दुसरी प्रणाली में थोडा अंतर है।

चन्द्रकान्त—मुझे तो परिणाम में कोई अंतर नही दिखायी देता। दोनों का असर समान होगा।

निरंजन—पर भिन्न मनोवृत्ति से। प्रथम प्रणाली से दुर्व्यवहार बंद होने की संभावना पर भय के कारण। दूसरी में मानसिक परिवर्तन के कारण। भय निकलते ही बुराई का आना फिर संभव है। पर सबसे बडा अंतर है कर्ता की मनोवृत्ति और सभ्यता के व्यवहार का।

चन्द्रकान्त—यह बहुत सूक्ष्म भेद है। व्यवहार में कोई फर्क नहीं होता। परिणाम या सफलता की कोई निश्चितता नहीं।

निरंजन—भेद सूक्ष्म नहीं है। वह महत्व का है। व्यवहार में दोनों कर्ताओं के जीवन पर अलग असर होता है। प्रथम प्रणाली में कर्ता भावना के आवेश में अशान्त है और दुसरी में वह वानप्रस्थी की शान्ति का अनुभव करता है। कार्य की उचितता या अनुचितता की प्रथम कसौटी तो कर्ता की मानसिक अवस्था है। यदि सफलता या परिणाम यही कसौटी मानली जायगी तो अनेक सफल और महान जीवन व्यर्थ माने जायेंगे। कार्यकी सफलता संपूर्णतः हमारे आधीन नहीं है। इस मापदंड से ही देखा जाय तो जीवन की जो सर्वश्रेष्ठ तीसरी प्रणाली हमने गिनी है, उसकी भी यही अवस्था होगी।

चन्द्रकान्त—किस प्रकार ?

निरंजन—तीसरी प्रणाली को हमने शक्ति का प्रयोग यह नाम दिया है। जीवन की यह सर्वश्रेष्ठ प्रणाली है। इसके अनुसार मनुष्य जब किसी कार्य को अपना लक्ष बना लेता है तो उसके लिए अपनी सारी शक्ति लगा देता है।

चन्द्रकान्त—यही उचित मार्ग है।

निरंजन—इस प्रणाली का अवलंबन केवल अपने प्रधान ध्येय प्राप्ति के लिए मनुष्य करता है। हर स्थान, हर समय और कार्य के लिए

इस प्रथा का अवलंबन नहीं करता। इस प्रकार यदि किया जाय तो जीवन अनिश्चित होजायगा। इस प्रणाली में भी जो दोष तुमने दूसरी प्रणाली में बताया वह रह ही जाता है।

चन्द्रकान्त — सारी शक्ति लगादेने के पश्चात भी कौनसा दोष रह जाता है।

निरंजन—कार्य सफलता की अनिश्चितता। सारी शक्ति लगा कर भी मनुष्य अपने कार्य को कर ही सकेगा इसकी गेरंटी व्यवहार में कभी हुई नहीं। हम राजकीय क्षेत्र का ही विचार करें तो कह सकते हैं कि लोकमान्य तिलक ने स्वराज्य प्राप्ति के लिए सारी शक्ति लगा दी। पर अपने जीवन में स्वराज्य प्राप्त न कर सके। भगतसिंहने अपनी आहुति से अंग्रेजी राज को भस्म करना चाहा पर न कर सका। सुभाषचन्द्र बोस का भी इसी प्रकार जीवन है। परिणाम की असफलता में भी कर्ता के जीवन की सफलता है। दूसरी प्रणाली में भी यही स्थिति है।

चन्द्रकान्त—ओर यही प्रथम में भी है। तब तीनों प्रणालियां समान होगयी।

निरंजन—परिणाम या सफलता की अनिश्चितता इस कसौटी पर तीनों मार्गों में समानता का दर्शन है। परंतु कर्ता की मनोवृत्ति, उसकी उत्कटता आदि बातों की ओर देखने से तीनों में मौलिक अन्तर है। सारी बातों का विचार करते हुये हम कह सकते हैं कि प्रथम प्रणाली साधारण, दूसरी प्रणाली मध्यम और तीसरी प्रणाली श्रेष्ठ है। साथ में यह भी कहा जासकता है कि दूसरी प्रणाली अपनी मध्यमता के कारण श्रेष्ठता भी रखती है।

चन्द्रकान्त—कारण वह तुम्हें पसंद है। अपनी बात मध्यम भी श्रेष्ठ है। बात करदी और काम समाप्त। कष्ट का और तकलीफ का काम नहीं। इस नाते मध्यम प्रणाली जरुर श्रेष्ठ है।

निरंजन—नहीं चन्द्रकान्त! मेरी कायरता पर दया करो। हम इन प्रणालियों का वीर की निगाह से विचार कर रहे हैं। जो कायर होगा वह तीनों प्रणालियों में अपनी कायरता का परिचय दे जायगा। वीर भी अपने जीवन में किसी पद्धति का अवलबं तो करता ही है न?

चन्द्रकान्त—वीर की निगाह से मध्यम प्रणाली सर्वश्रेष्ठ किस प्रकार होसकती है?

निरंजन—मैंने उसे सर्वश्रेष्ठ प्रणाली नहीं कहा है। इतना ही कहना है कि प्रणाली मध्यम होते हुए भी उसमें श्रेष्ठता के कुछ गुण हैं।

चन्द्रकान्त—किस प्रकार?

निरंजन—इसके अवलंबन की सर्वव्यापी शक्यता।

चन्द्रकान्त—जरा अधिक स्पष्ट करें।

निरंजन—हमारी सर्वश्रेष्ठ प्रणाली है "शक्ति का प्रयोग" चाहे वह हिंसा के मार्ग से हो या अहिंसा के। इस प्रणाली का हर स्थान, हर समय और हर अवस्था में उपयोग कठिन है। जीवन के मुख्य लक्ष्य के लिए इस प्रणाली की श्रेष्ठता है। पर हर बात के लिए उसका उपयोग अव्यवहार्य होजायगा। इसकी श्रेष्ठता में यह न्यूनता है। दूसरी प्रणाली की मध्यमता में यह गुण है कि प्रधान ध्येय के लिए श्रेष्ठ प्रणाली का उपयोग करते हुये हर समय इस मध्यम प्रणाली का उपयोग

किया जासकता है। यह प्रणाली श्रेष्ठ प्रणाली की पोषक है। अतः जीवन में श्रेष्ठ और मध्यम दोनों प्रणालियों का सामंजस्य जीवन सफलता का बडा साधन है। तीसरी प्रणाली श्रेष्ठ पर हर स्थान पर उपयोगी नहीं। मध्यम प्रणाली गौण पर हर जगह सहायक। तीसरी प्रणाली जीवन संघर्ष में विशाल शक्तिशाली टैंक है पर वह जीवन की गलियों में रक्षा नहीं कर सकती। मध्यम प्रणाली रिवोल्वर है जो हर स्थान में अल्पप्रमाण में हमारी आत्म रक्षा कर सकती है। क्यों भैया ठीक है ना?

चन्द्रकान्त—निरंजन, तुम्हारा कथन ठीक दिखाई देता है पर इतने वाद के पश्चात भी हम किसी निर्णय पर नहीं पहुंचे कि जिस काम को लेकर मैं आया था, उसके विषय में हम क्या करेंगे। जीवन का कितना अरण्य हमने छान डाला। पर अभी निर्णय के बाते हम जहां के वहीं हैं।

निरंजन—नहीं चन्द्रकान्त हमारा समय और शक्ति व्यर्थ नहीं गये हैं। हम निर्णय के नजदीक पहुंच गये हैं। अरण्य भ्रमण निरर्थक नहीं हुआ है।

चन्द्रकान्त—मुझे तो अभीतक बेकार ही दिखाई देता है।

निरंजन—देखो! हर अवस्था में किस प्रकार व्यवहार करें इस विषय में हमने तीन मार्ग निकाले। अब किस मार्ग से जाना इसका निर्णय मात्र करना है। काम सरल होगया है। जीवन में पथ आक्रमण की अपेक्षा पथ निश्चय ही अधिक कठिन कार्य है।

चन्द्रकान्त—तब हमने किस मार्ग का निश्चय किया?

निरंजन—तीन मार्गों का हमने अवलोकन किया। किस रास्ते जाना इसका निर्णय अभी करना है।

चन्द्रकान्त—कर डालो ताकि कुछ पता लगे।

निरंजन—हरएक की शक्ति और जीवन की रुचि के अनुसार निर्णय किया जासकता है। जिससे अपनी भावना का वेग रोका नहीं जासकता वह शाब्दिक प्रतिकार के मार्ग का तत्काल अवलंबन करेगा। जिसका प्रधान ध्येय भिन्न है वह नैतिक प्रभाव के पथपर अनुसरण करेगा। जिसने जेल सुधार अपना प्रधान लक्ष्य बना दिया है वह शक्ति प्रयोग के रास्ते से सहर्ष जायगा।

चन्द्रकान्त—यह व्यक्तिगत अधिकार और मार्ग ठीक हो पर तुम क्या करोगे ? यह कहो। हम सामुहिक रुप से क्या करें यह बताओ। कुछ कार्य करना है या सिद्धांतोंके सागर में केवल बौद्धिक गोते लगाते रहना है।

निरंजन—नहीं चन्द्रकान्त ! अब हम व्यवहार का ही विचार कर रहे हैं। प्रथमतः सामुहिक कार्य ! मेरी अपनी मान्यता है कि जेल सामुहिक कार्य का स्थान नहीं। मेरा अनुभव है की जेल में सामुहिक कार्य प्राय: सफल भी नहीं होते। वहां व्यक्तिगत कार्य ही होने चाहिये। या जिनकी रुचि और ध्येय समान हो उन्हें साथ काम करना चाहिए।

चन्द्रकान्त—अच्छा। सामुहिक बात को जाने दो। तुम और मैं क्या करें। इसका निर्णय करें।

निरंजन—इसका निर्णय करने के पूर्व कुछ व्यावहारिक बातों का विचार करना आवश्यक है। कार्य निर्णय के कसौटी के शक्ति और ध्येय इन दो प्रश्नों की हमने तात्विक चर्चा की। अभी समय, स्थान, अधिकार इन बातों का विचार बचा है।

चन्द्रकान्त - अच्छा। अभी कुछ बचा है। दो बातों का विचार विस्तार इतना हुआ है तो शेष तीन बातों की चर्चा सारी रात का काम हो जावेगी। हमारा विचार कार्य द्रोपदी का चीर होगया है।

निरंजन—नहीं भैया। इन बातों का सरसरी विचार कर लेंगे। इतना समय नहीं लगायेंगे। जब विचार क्षेत्र में उतर ही गये तो अधूरा काम क्यों छोडे। किसी भी काम के संपूर्ण सम्पादन की पद्धति ही श्रेष्ठ पद्धति है।

चन्द्रकान्त—ठीक। चलते जाइये। लाइये अपने समय स्थान और अधिकार को। अभी तक शक्ति ने सीमित किया। ध्येय ने ध्यानमग्न बनाया। अब स्थल, काल, अधिकार की शृंखलाओं का निर्माण करो ताकि जीवन सर्वत्र बंधनमय बन जाय। जेल सुधार क्या है ? यह तो हमारा ही सुधार है ? या हमारा विनाश है ? अच्छा कहो।

निरंजन—चन्द्रकान्त ! देखो ! तुम चाहते हो कि इस विचारचीर का अंत हो, साथ ही बीच बीच में नवीन सवाल भी पैदा कर देते हो। अभी तुमने बंधनों की बात कह दी। मेरी राय है कि जीवन के सारे बन्धनों को या सीमाओं को समझने से ही उसकी सच्ची शक्ति का पता लगता है। हमारा सारा जीवन बंधनमय है इसे अस्वीकार नहीं किया जा सकता। बन्धनों के ज्ञान में ही स्वतंत्रता का सौंदर्य और आनंद है।

चन्द्रकान्त—तुम्हारा बंधन ज्ञान स्वीकार है। अब मैं अपनी जिव्हा पर बंधन लगाऊं ताकि इस वाद के बंधन से मेरा शीघ्र छुटकारा हो और मैं अपनी स्वतंत्रता का निद्रामय स्वाद ले सकूं। सच है। बंधन में स्वतंत्रता है तो फिर मालूम नहीं हम राजकीय बंधनों के विनाश का प्रयत्न क्यों कर रहे हैं और इन जेलों में भी क्यों सड़ रहे हैं ?

निरंजन—अब तुम्हारा मजाक आरंभ होगया। तुम्हारी थकान भी मैं देख रहा हूं और नवीन सवाल पैदा करने की मनोवृत्ति भी। अब क्या हम राजकीय बंधनों को क्यों निवारण करते हैं इसकी बहस करें। भैया! स्वतंत्रता की सीमा बंधन है उसी प्रकार बंधन की सीमा है स्वतंत्रता। हर अवस्था का अतिरेक अन्याय और असहनीय है। हम राजकीय बंधनों का विनाश नहीं कर रहे है। पर राजकीय बंधनों का जो अतिरेक परकीय सत्ता बंधनों में होगया है उसका नाश करने में लगे हैं। अंगरेजों के राज के नाश के अनंतर भी स्वराज्य के राज के बंधन तो रहेंगे ही। संभवतः अधिक दृढ होजायें।

चन्द्रकान्त—मंजूर। अब नवीन सवाल यथाशक्ति उत्पन्न नहीं करूंगा। तुम ही जरा विस्तार के साथ कहते जाओ ताकि सवाल करने का काम ही नहीं पडे। राजकीय बंधनों के नाश के वाद का अंत हुआ। अब तुम्हारा समय, स्थान का श्रोत चालू करें।

निरंजन—तुम्हारी सूचना के अनुसार मैं सारी बातों की चर्चा संक्षेप में करूंगा। पर जहां आवश्यक हो वहां तुम्हें भी स्पष्टीकरण मांगना चाहिये। तुम्हारा यदि संपूर्ण मौन होजावेगा तो मेरा प्रवाह भी शीघ्र कुंठित गति होजायगा। हम पैलतीर न पहुंच सकेंगे। तुम्हारी जिव्हा बंधन असहयोगका काम न करे अन्यथा हम वाद यहीं समाप्त करें और आराम करें। लम्बे समय तक का बौद्धिक कार्य कुछ कठिन होजाता है।

चन्द्रकान्त—नहीं निरंजन! न मैं थका हूं और न मुझे अरूचि पैदा हुई है। सारी चर्चा में मुझे दिलचस्पी रही है और अंत तक रहेगी। तुमने यह क्या समझ लिया। हम आगे बढें। समय स्थान का विचार करें।

निरंजन—मुझे अत्यंत प्रसन्नता है। समय स्थान के विषय में इतना ही कहना है कि कार्य का औचित्य समय स्थान पर भी अवलंबित रहता है। एक स्थान का कार्य अन्य स्थान पर अनुचित होसकता है। एक समय का दूसरे समय में ...

चन्द्रकान्त—याने।

निरंजन—उदाहरण से देखें। चार मित्रों की मंडली में हास्य रस का प्रवाह उचित है। पर स्मशान में प्रेत क्रिया के समय कोई हास्यरस का अभिनय आरंभ करें तो वह अनुचित होजायगा। स्मशान में शान्ति और मौन उचित व्यवहार है। जविन का आत्म निरिक्षण वहां उपयोगी कार्य होसकता है। सन्यास की आवश्यकता पर व्याख्यान देते समय कोई पंडित स्त्रियों की, धन की, बालकों के मोह की निंदा करे तो समझ में आसकता है पर किसी विवाह के अवसर पर वर वधु को आशीर्वाद देने के समारंभ के समय कोई विद्वान अपने ज्ञान का भंडार खोलकर कहने लगे स्त्री विष-वल्ली है। मोक्ष की बाधिका है। रक्त की सामुग्री है। ब्रह्मचर्य की विनाशिका है। उसका स्पर्श और दर्शन परमेश्वर की अकृपा का कारण है। तो हम उसे पंडित या विद्वान न कह कर और कुछ कहेंगे। उसी प्रकार जेल सुधार की बात है।

चन्द्रकान्त—किस प्रकार ? यह उदाहरण जेल सुधार पर किस तरह लागू होगा।

निरंजन—जेल में होने वाले दुर्व्यवहार का निवारण आवश्यक और उचित होने पर भी वह कार्य कहां और कब किया जाय इसका विचार तो जरूरी है।

चन्द्रकान्त—जेल सुधार जेल में किया जाय। अन्याय निवारण जब अन्याय होता है उस समय किया जाय। यतिन्द्रनाथदास ने अपना कार्य जेल में किया।

निरंजन— यतिन्द्रनाथदास का उदाहरण है। महान विभूतियां समय और स्थान के बंधन से उपर उठने की क्षमता रखती हैं। कारण अपनी कृति के योग्य बलिदान करने का साहस उनमें होता है। दास ने अपना जीवन दे दिया पर साधारण मानव यह शक्ति नहीं रखता। मनुष्य समय और स्थान के बंधनों से सतत बंधा है। उसे लक्ष्य में रखकर ही सारा काम करना होता है।

चन्द्रकान्त—तब जेल का स्थान और अभी का समय हमारे लिए उचित है या अनुचित।

निरंजन—अनुचित।

चन्द्रकान्त—तब हम कुछ न करें, इस निर्णय पर पहुंचे। खूब विचार किया और अच्छे निर्णय पर भी पहुंचे।

निरंजन – चन्द्रकान्त ! मेरे कथन का यह अर्थ तही कि हम कुछ न करें। क्या करें और किस प्रकार करें इसका तो विचार कर रहे हैं। जेल सुधार कार्य के लिए वर्तमान जेल का स्थान और समय चाहिये उतना उचित नहीं, इतना ही अर्थ है। तथापि इस अवस्था में भी कौनसा ओर कितना कार्य कर्तव्य है यह प्रश्न अभी अलग है।

चन्द्रकान्त—अच्छा। तो बताइये जेल का स्थान अयोग्य क्यों है ?

निरंजन—इस लिए कि कारागृह, क्रिया या आन्दोलन की जगह नहीं है।

चन्द्रकान्त—क्यों ? वह काहेका स्थान है ?

निरंजन—राजसत्ता जिन व्यक्तियों को समाजके लिए हानिकारक समझती है उनके निवासका वह स्थान है। हर राजसत्ता के साथ जेलखाना है। चाहे वह स्वदेशी हो या परदेशी।

चन्द्रकान्त—तो क्या हम समाज के लिए हानिकर हैं। जो हमें जेल में रखा गया।

निरंजन—राजसत्ता की निगाह में तुम्हारा बाहर रहना हानिकर है। इसी कारण तुम्हारा जेल निवास है।

चन्द्रकान्त—पर भारतीय जनता हमारा बाहर रहना हानिकर नहीं मानती। वह तो हमें जेल में रखना अनुचित तथा अन्याय मानती है। जेलखाना देशभक्तों तथा माहात्माओंके निवास का स्थान है। आज वह कृष्ण मंदिर बन गया है।

निरंजन—तुम्हारे कथन में अर्धसत्य है। यहां राजसत्ता परदेशी होने के कारण और भारतीय समाज का प्रयत्न उससे अपने को मुक्त करने का होने की वजह से यहांके राजा और निवासियों में संघर्ष है। आजके राज्य को ही यहां का समाज अनुचित तथा हानिकर मानता है। तब उस प्रश्न को लेकर जो जेल में भेजे जाते हैं उनके विषय में राजा तथा समाज इनका दृष्टिकोण भिन्न है। जहां स्वराज्य है वहां भी जनता के किसी कल्याण के प्रश्न को लेकर कोई राज्य के प्रतिकूल कार्य करेगा तो उसके विषय में भी जनता और राजसत्ता की भिन्न राय रहेगी परंतु हमारे अलावा इस जेल में ऐसे भी व्यक्ति हैं जो सर्व साधारण सामाजिक अपराधों के कारण जेल में रखे गये हैं। उनके विषय में राजसत्ता और

जनता दोनों का समान ध्यान है। इसी कारण हमारे जेल राजकीय विभाग और साधारण विभाग दो भागों में विभक्त हैं। राजकीय विभाग के न्याय के विषय में राजा और जनता में मतभिन्नता है। साधारण विभाग के बारेमें एक मत। इसी लिए तुम्हारा कथन अर्ध सत्य है।

चन्द्रकान्त—अच्छा। तुम्हारा यह कथन मान भी लिया जाये, तब भी यहां आंदोलन क्यों नहीं होसकता ?

निरंजन—जेल की व्यवस्था रक्षा के लिए। यदि कैदियों को आंदोलन करने दिया जाय तो किसी जेल में व्यवस्था रहेगी ही नहीं। जेल में हर कैदि का व्यक्तिगत जीवन है। सामुहिक जीवन नहीं। बन्दीगृह व्यक्ति निवास है। यह कैदियों का समाज नहीं।

चन्द्रकान्त – क्या ? ए. बी. क्लास के कैदियों को भी अधिकार नहीं ?

निरंजन—नहीं। किसी भी कैदी को यह अधिकार नहीं है। स्वराज्य में भी हमारे जेलखानों में यही व्यवस्था रही। कैदियों को आंदोलन करने का, सब मिलकर शक्ति संग्रह करने का या एक कैदी को दूसरे कैदी की सहायता करने का कोई अधिकार नहीं रहेगा। स्वतंत्र देशों में भी आज जेलखानों की यही परिपाटी है।

चन्द्रकान्त—पर जेलखानों में सामुहिक कार्य हुये हैं। सफल सामुहिक कार्य हुये हैं।

निरंजन—मुझे स्वीकार है। पर अभी तो हम अधिकार या कानून की चर्चा कर रहे हैं। कानून होते हुये भी जिनमें शक्ति है

उन्होंने उसके प्रतिकूल कार्य किया है, करते हैं और अपनी कृति का परिणाम भी भोगते हैं। यह तो भिन्न स्थिति है। अधिकार और उचितता की निगाह से जेल सुधार के आन्दोलन का स्थान जेल के बाहर है। भीतर नहीं।

चन्द्रकान्त—जेल के बाहर तो इस बार आन्दोलन करना ही है।

निरंजन—उसका विचार जेल के बाहर जाने पर करेंगे और सोचेंगे कि परदेशी राज्यसत्ता के रहते हुये जेल सुधार का व्यापक आन्दोलन करने का समय है या नहीं। समय की सीमा का विचार करने का प्रश्न है। उसमें यह विचार आगया और उसका संक्षेप में यही उत्तर भी होगा कि 'नहीं'। एक प्रश्न निपटा। स्थान का सवाल भी विचारणीय हैं।

चन्द्रकान्त—कुछ अंश में तुम्हारे साथ सहमत होते हुये भी मैं यह नहीं मानता कि राजकीय कैदियों को भी यह अधिकार नहीं है। राजकीय बंदियों को कुछ विशेष अधिकार हैं।

निरंजन—राजकीय बन्दियों को विशेष अधिकार या सुविधायें हैं, उनके अपने निवास, खान-पान, जेल अधिकारियों के व्यवहार आदि के विषयों में इन सुविधाओं को छोड हम कैदी हैं इसे अस्वीकार नहीं किया जासकता। आन्दोलन की निगाह से सर्वसाधारण और राजकीय कैदी में कोई भिन्नता नहीं है और नहीं रखी जासकती है। यदि कल हम जेलर साहब से कैदियों के साथ होनेवाले दुर्व्यवहार बन्द करने की बात अधिकार के नाते कहें और वे आहिस्ते से कहें "जेल व्यवस्था में हस्तक्षेप करने का आपको कोई अधिकार नहीं"। तो हमारे पास इसका क्या उचित उत्तर है?

चन्द्रकान्त—अभी तक अपना वाद का क्षेत्र था। अब तुम जेल अधिकारी बनकर उनका पक्ष लेने लग गये। अब क्या वाद किया जाय।

निरंजन—जिसके प्रति हमें कुछ कदम उठाना है। उसकी स्थितिमें हम अपने आपको रखकर उसके दृष्टिकोण का विचार करलें तो हमारा कार्य निर्दोष होने की अधिक संभावना रहती है। मैं जेल अधिकारी नहीं बन रहा हूं पर समय आने पर जेल अधिकारियों से अपनी रक्षा किस प्रकार करूं, इसकी तैयारी कर रहा हूं।

चन्द्रकान्त—यदि तैयारी करना है तो मेरा उत्तर सुन लो। जेल अधिकारियों के कार्य अनुचित है, अतः हमें हस्तक्षेप करने का अधिकार है। क्या जेल अधिकारी कह सकते हैं कि उनका कैदियों को मारना आदि दुर्व्यवहार उचित और उनके अधिकार क्षेत्र में है। फिर जेल अधिकारियों की क्या मजाल है कि हमें इस प्रकार अपमानजनक उत्तर दें। समझे ?

निरंजन—समझा और यह भी समझा कि तुमने दो नवीन प्रश्न उपस्थित कर दिये। एक जेल अधिकारियों के ! कार्य की उचितता। दूसरा उनकी शक्ति।

चन्द्रकान्त—दोनों के विषय में मेरा कथन सही है। हमारे प्रतिकार की नींव इस सत्य पर ही स्थापित है।

निरंजन—जरा विचार करें हमारी नींव में सत्यता होगी, तो हमे बल अवश्य मिलेगा। पर भैया, तुम्हारी दोनों नींव बालुकामय हैं। हमारे काम की नहीं।

चन्द्रकान्त—नवीन अविष्कार। जरा बताइये किस प्रकार?

निरंजन—जेल अधिकारियों का गैर कानूनी व्यवहार इस विषम में जेल अधिकारी उत्तर दे सकते हैं। कैदी नियमों का पालन कहां करते हैं? यदि कभी डराना और मार भी देना उन उपायों को छोड जो अन्य शिक्षायें हैं उन्हें देना आरंभ किया जायगा, तो कैदियों का जीवन अधिक कष्टदायक होजायगा। कैदी तो चपत पसंद करेगा बनसिवत कि डंडा बेडी और माफी काटना। हमारा हिंसा से काम चलता है। उसके बिना जेल व्यवस्था असंभव हैं। हमारे कुछ काम कानून की निगाह में ठीक नहीं है तो हमें पूछनेवाले, दन्ड देनेवाले हैं। हमारी कृतियों के लिए हम हमारे ऊपर के अधिकारियों को जबाबदार हैं। अन्य किसी को नहीं। हर एक को अपने अधिकार के दायरे में रहकर बात करनी चाहिये और काम भी। आप इस विषय में क्षमा करें। आप अपने से संबंध रखनेवाली बातों की चर्चा करें। चन्द्रकान्त, इस प्रकार यदि जेल अधिकारी कहें तो हमारे पास जोरदार या उचित उत्तर नहीं है।

चन्द्रकान्त—तुम्हारा कथन कुछ अंश में सही है पर मेरा विश्वास है कि इस प्रकार का उत्तर हमें कोई नहीं देगा। हमारे प्रभाव मात्र से इन गरीबों का कुछ काम बन जायगा।

निरंजन—तुम्हारी दूसरी दलील जेल अधिकारी इस प्रकार कहेंगे नहीं, कारण हमारा उन पर प्रभाव है। तब तो जेल अधिकारी या तो कायर हैं या तुम्हारी देशसेवा के असर के कारण झगडा नहीं करना चाहते और चतुराई से सारा काम बना लेना चाहते हैं। मुझे ऐसे उदाहरण मालूम हैं, जहां हमने हमारी देश सेवा के प्रभाव का उपयोग किया है, वहां जेल अधिकारियों की ओर से उत्तर मिलें है, प्रतिकार हुआ

है और संघर्ष भी। हमारी प्रतिष्ठा के प्रभाव से कोई क्षणिक काम हो भी जाय तो वह स्थायी नहीं। जेल अधिकारियों की कमजोरी पर हमारी नींव खडी नहीं करना है। हमारे अधिकार के बल पर हमारे कार्य की जड जमाना है। हमने देखा कि तुम्हारी दोनों दलीलें अधिकार की निगाह से निर्बल हैं। इस बुनियाद पर जेल अधिकारियों से बात करना उचित नहीं।

चन्द्रकान्त—तुम्हारे कथन में कुछ सार अवश्य है। पर क्या हम यहां कुछ कर ही नहीं सकते ? हमें किसी प्रकार का अधिकार है ही नहीं।

निरंजन—तुम्हारी यह अधिकार की बात मुझे एक दर्दनाक घटना का स्मरण करवाती है।

चन्द्रकान्त—कौनसी ?

निरंजन—भैया, करुणाजनक कथा है। शीत काल के सबेरे का समय था। मैं अपने कमरे में गरम कपडों में लिपटा पढने में मग्न था। पडोसी के यहां से बालक के जोरसे रोने की आवाज आई। मैं बाहर आया। सामने की छत पर माता को अपनी सुकुमार बालिका पर प्रहार करते देखा। बालिका को रुदन करते, दौडते निहारा। माताने पीछा कर हाथ पकड शीत से जर्जरित कोमल गालों पर दो चपतों का आघात कर दिया। बालिका गला फाड रोती है। माता से छुडा भागना चाहती है। प्रयत्न करती है पर शारिरिक निर्बलता के कारण झटपट कर रह जाती है। माता राक्षसी का रुप धारण कर लेती है। हाथ मुंह दोनों चलते हैं। दृष्य देख मैं दौडा। बालिका को बचाना चाहा। करुणा पूर्ण स्वर में माता को संबोधन किया " बहन यह क्या

करती हो "? माता ने बालिका को अपने हाथ के झटके से दूर हटाया, चमकती आखों और क्रोध भरी आवाज में मुझे डांट कर कहा " मां बेटी के बीच आप बोलने वाले कौन "? बालिका पर एक चपत का प्रहार और कर दिया। मेरी शक्ति निकल गयी, कान बहरे होगये, पैर जरा जकड गये। मेरा अहंकार कुछ छोटा होगया। मेरी आखों में आंसू आगये। मेरे भारी मन और शरीर को लेकर मैं अपने कमरे में वापिस आगया। सारे दिन व्यथामय हृदय से उस दृष्य को स्मृति के सामने आते जाते देखता रहा। उस बालिका पर मेरा अत्यंत स्नेह था। सुंदर थी, सुकुमार थी, उसकी जबान अत्यंत मोहक थी और कोई भी उसको प्यार कर सकता था। वह मेरे पास सदा आया जाया करती थी, खेला करती थी और मेरे मनको बहलाया भी करती थी। उसकी माता पर भी मेरा प्रभाव था। उस घटना ने मुझे विलक्षण अनुभव दिया। अधिकार की चर्चा ने और प्रभाव के प्रश्न ने उस घटना को मेरे सामने खडा कर दिया। निरंजन जरा स्तब्ध होगया ! फिर कहने लगा। चन्द्रकान्त, इस घटना ने मानव समाज की ममता और क्रूरता दोनों का चित्र एक साथ मेरे सन्मुख चित्रित कर दिया।

चन्द्रकान्त—निरंजन, इस घटना ने तो मेरे हृदय को भी हिला दिया है। तुमने कैसा वर्णन किया। पर दोनों चीजें एक साथ कैसी ?

निरंजन—चन्द्रकान्त, मारपीट तो मानव के अनादिकाल से चली आई है। उसी का विशाल रुप युद्ध हैं। मनुज्य के सामाजिक जीवन का आरंभ केन्द्र कुटुंब है। पति-पत्नि-मातापिता संतान प्रेम का प्रथम निकेतन है। कुटुंब प्रेम मानव प्रेम में परिणित हुआ है और कुटुंब की मारपीट पृथ्वी व्यापी युद्धों में। चन्द्रकान्त ! प्रेम-निकेतन कुटुंब में हमने और क्या क्या देखा। कितने पतियोंने अपनी पत्नियों को पीटा है

और आज भी पीटते हैं। कितने माता पिताओं ने अपने निर्बल कोमल सन्तान पर हाथ चलाये है और आज भी चलाते हैं। कितने बड़े भाई बहनों ने छोटे भाई बहनों को अपनी शक्ति का परिचय दिया है और आज भी देते हैं। परमेश्वर का प्रेममय स्वरूप मातृ प्रेम के रूपमें इस पृथ्वी पर प्रगटा है, इस प्रकार कहा जाता है। प्रेममूर्ति माताओं ने अपनी सन्तान को कितना सताया है, कितनी मारपीट की है, कितनी माताओं ने अपने शक्तिहीन शिशुओं को शव का स्वरूप दे दिया है। चन्द्रकान्त। संतान के करुण रुदन से मानव समाज का सूक्ष्म वातावरण भरा है और आज सभ्य कहलाने वाले युग में भी बालकों के करुण रुदन का अभाव नहीं है।

निरंजन विचारमग्न और स्तब्ध होजाता है। चन्द्रकान्त भी विचार-मग्न रहता है और कुछ क्षणों के पश्चात् करुणमयी आवाज में कहता है: निरंजन! आज तुम कहां चले जारहे हो। यह क्या वर्णन कर रहे हो?

निरंजन—चन्द्रकान्त! मन अत्यंत उद्विग्न होगया है। इस सारी घटना के स्मरण ने जेल को एक नवीन रुप में मेरे सामने खड़ा कर दिया है।

चन्द्रकान्त—कौनसा रुप भैया?

निरंजन—जेल मुझे एक कुटंब दिखाई देता है। जेलर सुपरिनटेन्डेंट इस का कुटुंब के मातापिता है। वार्डर हैं बड़े भाई बहन और कैदी निर्बल बालक।

चन्द्रकान्त—पर इस कुटुंब में कितनी पाशविकता?

निरंजन—और क्या सच्चे कुटुंब में कम? सुपरिनटेन्डेंट, जेलर अपने पेटके कोमल बालकों को मारते हैं, गाली देते हैं! वार्डर अपने

बालबच्चों को पीटते हैं। यह देख दिलमें विचार आता है कि जिनमें अपने बालबच्चों के प्रति मानवता का इतना अभाव है उनके सामने कैदियों की कौन कथा ? प्रेम स्थान कुटुंब में जो चलता वही यहां यम–निकेतन कारागृह में प्रतिध्वनित होता है। चन्द्रकान्त। समाज शरीर में यहां वहां दिखाई देने वाले सारे नैतिक फोडे फुन्सी और विशाल रुप में प्रगट होने वाले महान नैतिक रोग समाज शरीर के अनिर्मल नैतिक रक्त प्रवाह का परिणाम है।

चन्द्रकान्त— निरंजन, हम कहां चले जारहे हैं ? आज क्या तुम्हारे विवेक और भावना सागर के बान्ध टूट गये हैं। इस गति से हमारी चर्चा की समाप्ति असभंव है।

निरंजन—सही है। आज मेरी भावना का वेग आकाश–स्पर्शी है और विवेक का प्रवाह पृथ्वीतल पर प्रवाहित है। पृथ्वी और आकाश के बीच मैं कहां रहूं, इसी प्रयत्न में पडा हूं और तुम्हारे सहारे निश्चित पैर रखना चाहता हूं। अच्छा हम अपने अधिकार का विचार कर रहे थे न ?

चन्द्रकान्त— हां।

निरंजन—हमने संक्षेप में देखा कि जेल व्यवस्था में हस्तक्षेप करने का हमें कानूनी अधिकार नहीं है।

चन्द्रकान्त—कुछ अंश में यह सही दिखाई देता है।

निरंजन—कानूनी अधिकार की निगाह से हमने देखा। अब जरा नैतिक अधिकार की निगाह से विचार करें।

चन्द्रकान्त — याने।

निरंजन—कानून अधिकार चाहे हमें न हो पर नैतिक भी है या नहीं ?

चन्द्रकान्त—क्या हमें इस दुर्व्यवहार का प्रतिकार करने का नैतिक अधिकार भी नहीं ? इसमें भी तुम्हे संदेह है ।

निरंजन—विचारणीय बात है और कानूनी अधिकार से भी अधिक गंभीर ।

चन्द्रकान्त—किस प्रकार ?

निरंजन—हमारे व्यवहार के कारण ।

चन्द्रकान्त—याने !

निरंजन—अभी तक कैदियों के साथ जेल अधिकारी जो व्यवहार करते हैं, वही हमने देखा । अब जरा हम उनके साथ जो व्यवहार करते हैं उसका भी निरीक्षण करें ।

चन्द्रकान्त—अवश्य करना चाहिये ।

निरंजन—भैया । जेल अधिकारियों को आप उनके दुर्व्यवहार के विषय में कहें ओर वे यदि उत्तर दें । “ आप अपनी सेवामें काम करने वाले कैदियों को जरा जरा सी बात में अपशब्दों से अलंकृत करते हैं । कैदियों को गाली देना योग्य है क्या ? मारका घाव बडा है या गाली का ? आप में से किसी किसी ने कैदी पर हाथ तक उठाया है । जरा से अपराध के कारण उसे यार्ड के बाहर निकलवा दिया है । आपको कहते सुना है । कि “ दो लाते लगाई जाय तबही ठीक रहते हैं । अब फिर किया तो

जेलर साहब से कहकर मरम्मत करवादूंगा"। आपके प्रति अपराध हो तो मरम्मत का सहारा और मरम्मत क्षम्य। पर यदि हमारे प्रति के अपराध में हम मरम्मत करें तो वह अक्षम्य। आप कैदियों की समानता और मानवता की दुहाई देते हैं, पर भोजन में आपके यहां कितना भेद है। एक चम्मच घी चुरा लेने पर आपने गालियों से गगन गुंजा दिया था। आप अहिंसा में विश्वास करते हुये भी इनसे काम नहीं ले सकते। आतंक का अश्राय चाहते हैं। हमारा तो हिंसा ही सहारा है। उसका हम उपयोग करते हैं और अपना काम चलाते हैं" चन्द्रकान्त! इस प्रकार की बातों का हमारे पास क्या उत्तर है?

चन्द्रकान्त स्तब्ध रहता है। निरंजन फिर कहना आरंभ करता है...... चन्द्रकान्त! इतना ही नहीं हमारा नैतिक अपराध इससे भी अधिक गहरा है।

चन्द्रकान्त—वह भी बता दो।

निरंजन—जेल अधिकारी जब कैदियों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं, तब उसके प्रतिकार के लिए हम सब तैयार होजाते हैं। पर जब हमारे साथी अनेक दुर्व्यवहार करते हैं, तब हम सब मौन रहजाते हैं। परसों हमारे मित्र ने एक नौकर को कितनी गालियां दी और वार्डर को बुलाकर किस बुरी तरह से उसे यार्ड के बाहर निकलवा दिया। वह व्यवहार हमको सबको अखरा। पर हमारी सबकी जान निकल गयी थी। जो व्यक्ति अपने साथियों के दुर्व्यवहार का प्रतिकार नहीं कर सकता उसे जेल अधिकारियों के दुर्व्यवहार का प्रतिकार करने का क्या नैतिक अधिकार है, और उस प्रतिकार का क्या परिणाम और मूल्य?

विवेक या निर्बलता

चन्द्रकान्त अत्यंत खिन्न आवाज में—निरंजन ! आज मैं यह सब क्या सुन रहा हूं ? हमारी निर्बलता या अन्याय के प्रतिकार की अयोग्यता का कितना सच्चा स्वरुप तुमने आज मेरे सामने खड़ा कर दिया।

निरंजन—चन्द्रकान्त ! अन्याय निवारण के अन्तरंग में भी किसी न किसी अन्य अन्याय के सुक्ष्म अंकुर विद्यमान रहते हैं, इसी कारण अन्याय निवारण में संपूर्ण सफलता नहीं मिलती। कभी कभी तो यह विचार भी आजाता है कि इस मानवी निर्बलता के कारण ही संसार में अन्याय चल रहे हैं।

चन्द्रकान्त—निरंजन ! तुमने आज निष्क्रियता की सीमा पर पहुंचा दिया। निर्बलता के निकेतन में निवास निश्चित कर दिया। इस सारी चर्चा का यह निष्कर्ष निकला कि हम किसी अन्याय का प्रतिकार करने की क्षमता ही नहीं रखते। मैं तुम्हारे पास आया तब क्रिया की तरंगों से उछलती भावना का हृदय सागर लेकर आया था और इस चर्चा के पश्चात् मै अपने को विवेक के बोझ से दब कर जीवनसागर के तल में निष्क्रिय तथा निर्बल पाता हूं। निरंजन ! हमने यह क्या विचार किया। किसी क्रियात्मक निर्णय पर पहुंचो ना। जीवन का कौन सच्चा साथी है। भावना या विवेक ? किसमें बल ? भावना में या विवेक में ?

निरंजन—भैया। तुमने इस वाद के निराशामय रुपको देखा। उसकी आशामय आकृति का अवलोकन नहीं किया। यह चर्चा हमें निर्बल बनाने के लिए नहीं। सबल बनाने के लिए हुई है। मुझे तो बल का अनुभव हो रहा है। मैं देख रहा हूं कि हरएक व्यक्ति अपनी शक्ति के अनुसार प्रतिकार की क्षमता रखता है। हमारे भीतर अन्याय जितना कम उतनी ही हमारी प्रतिकार शक्ति अधिक। प्रतिकार शक्ति की

वृद्धि का साधन अन्तर निर्बलता का निवारण है। यह वाद हमें निष्क्रिय न बनाकर हमें भीतर बाहर दोनों ओर क्रियाशील बनाने का मार्ग दिखावे। विवेक एक बार हमें जीवन सागर के तल में लेजाता दिखाई देता है पर उसकी शक्ति से अन्तरबल प्राप्त कर उपर उठेंगे तो डूबने का भय तक नहीं रहेगा। भावना के सागर में जब हम तैरते हैं तो डूबने का भय रहता है कारण हमने सागर की गहराई को नहीं देखा है। अतः चद्रकान्त। आज हमने जीवन के क्रिया–सागर की गहराई को कुछ अंश में देखा है। अब उपर आकर तैरना है और भावना के बल का सहारा लेना है। जीवन में विवेक और भावना दोनों का स्थान है।

चन्द्रकान्त—किस प्रकार ?

निरंजन—भावना जीवन झाड की जड है। विचार उसके पुष्प और क्रिया उसका फल है। भावना में जीवनदाता बल है। विचार सुमनों में जीवन का सौंदर्य और सौरभ है तथा कृति फलों में जीवन की उपयोगिता। वृक्ष की जडें अपने रस से पुष्पफलों का पोषण करती हैं। अपने जीवन के लिए उनका शोषण नहीं करती। अतः हमारा भावना रस जीवन के पुष्प फलों को विकसित करने के लिए है न कि उन्हें कुमलाने के लिए। चन्द्रकान्त। हम अपने जीवन को पुष्पमय और फलमय बनावें यही जीवन सार्थकता है।

चन्द्रकान्त—कुछ समझा पर मैं अभी कुछ असमंजसता में हूं। हमने इतना विचार किया। सारा मंथन कर डाला। पर अभी अमृत रुपी सार तो निकला ही नहीं।

निरंजन—चन्द्रकान्त ! जरा शान्ति से विचार करो। अभी तुम्हारी उत्तेजित भावनाओं नें विवेक रस का अखंड पान नहीं किया है। आज के प्रश्न का भी संपूर्ण मंथन होगया है, इस प्रकार मैं नहीं मानता।

चन्द्रकान्त—क्या अभी भी कुछ रह ही गया है ?

निरंजन—हां ! यह सारे कैदी तुमसे और मुझसे शारिरिक बल में अधिक बलवान होते हुये भी इन अन्यायों को क्यों सहन करते हैं ? यहा कई कैदी हैं जिन्होंने खून करने का प्रयत्न किया हैं। कई है जिन्होंने बाहर जरा से अपमान के कारण मारपीट कर डाली है और जेल आगये हैं। यह सारे कैदी यहां इतना अपमान और अत्याचार क्यों सहन करते हैं ? व्यक्तिगत तथा सामुहिक रुप में इनका क्या कर्तव्य है ? समाज तथा व्यक्ति की प्रगति अन्यों की कृपा से होना उचित है या स्वप्रयत्नों से होना लाभ दायक है ? आदि बातों का विचार अभी हो सकता हैं परंतु हमने आज काफी और जरुरी विचार कर लिया है। इस ही में संतोष मानना चाहिये।

चन्द्रकान्त--ठीक है। अब और वाद करने की मनोवृत्ति नहीं है। अब तो हमारे कर्तव्य का निर्णय कर डालें।

निरंजन—अवश्य ! तुम ही बताओ हमें क्या करना चाहिये ?

चन्द्रकान्त—मेरे लिए कठिन है। भावना की प्रेरणा है कि दुर्व्यवहार का प्रतिकार किया जाय। इतने विचार विनिमय का परिणाम है कि हमारा प्रतिकार अनाधिकार है। क्या किया जाय, इसका निर्णय भी तुम ही करो। उस ही में मुझे शान्ति है।

निरंजन—आज की परिस्थिति में कर्तव्य का निर्णय अत्यंत नाजुक है। पर मैं अपने में बल का अनुभव करता हूं कि कल मैं नैतिक प्रतिकार के मार्ग का अवलंबन करूं। मै जेलर साहब से बात करने वाला हूं। उनकी मनुष्यता, न्याय-प्रियता और दया की भावना को

जागृत करने का मैं शक्तिभर प्रयत्न करूंगा। भैया मालूम नहीं कितनी सफलता मिलती है। विश्व में अनेक शक्तियों का खेल चल रहा है। हरएक को खेलने का अधिकार है। खेल का परिणाम अन्य खिलाड़ियों की शक्ति तथा कुशलता से संबंधित है।

चन्द्रकान्त—तुम्हें सफलता मिले यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है।

निरंजन—कृपा है। पर भैया! मेरा वह निर्णय होते हुये भी तुम्हें या अन्य साथियों को दूसरे किसी मार्ग का अवलंबन करने का अधिकार है।

चन्द्रकान्त—यह ठीक है! मुझे तो अब इस विषय में कुछ करना है नहीं। तुम्हारा मार्ग मुझे स्वीकार है और तुम्हें यदि सफलता नहीं मिल सकती तो मुझे सफलता मिलने की तनिक भी आशा नहीं।

निरंजन—चन्द्रकान्त। इतनी निराशा क्यों? हमारी चर्चा ने यदि तुम्हारे जीवन में निराशा पैदा की है तो वह चर्चा व्यर्थ ही है।

चन्द्रकान्त— निराशा नहीं। अपनी शक्ति की सीमा का ज्ञान है।

निरंजन—तब फिर प्रसन्न होओ। प्रसन्नता से जाओ और शान्ति से निद्रा का आनन्द लो। ज्ञान निराशा नहीं, निर्बलता नहीं, वह तो प्रसन्नता और शक्ति है।

चंद्रकांत—ठीक। तब चलूं?

निरंजन—प्रसन्नता से जारहे हो ना ?

चन्द्रकान्त—आया था उतनी उत्तेजना से नहीं जारहा हूं। अब व्यथा की अपेक्षा विचारमग्नता का मुझपर अधिक असर है। आशा है आजकी चर्चा से मेरे जीवन को काफी लाभ होगा। मुझे नई दृष्टि मिली है।

निरंजन—कृपा है। तुम्हारे साथ इतनी चर्चा कर मुझे भी आनंद हुआ। सारी परिस्थीति को मैं भी ठीक देख सका। भैया! इतनी रात होगयी। अब जाकर आराम करो। प्रातःकाल तुम्हें प्रसन्न चित्त तथा स्मित मुख देखना चाहता हूं।

चन्द्रकान्त—अच्छा। तुम्हारी इच्छा सफल होगी।

चन्द्रकान्त उठा। निरंजन उठा। चन्द्रकान्त अपने शयन स्थान की ओर चलने लगा। निरंजन भी चार कदम मौन साथ गया। चन्द्रकान्त के कंधे पर हात रखकर प्रेममयी आवाज में निरंजन ने 'अच्छा' कहा और वापिस लौटा। चन्द्रकान्त अपने शयन स्थान पर पहुंचा। सारे साथी निद्रित हैं। मालूम नहीं कौन गाढ निद्रा के आनन्द से आलिंगित हैं और कौन स्वप्न सृष्टी में संचार मग्न हैं।

इधर निरंजन ने भी अपने पलंग पर पैर पसारे। निद्रा ने आवरण फैला दिया।

चंन्द्रकान्त भी लेटा। निद्रा अभी उसके समीप भी नहीं आई है। अपने चारों ओर के वायुमंडल का उसे भान हो आया। जेल का वार्डर

अपनी लालटेन लिए गस्त लगाते उसकी खटिया के समीप से निकल गया। नजदीक के यार्ड की बॅरक में निद्रित कैदियों की गिनती लगाने वाले जागृत कैदी की पुकार ध्वनी उसके कानों तक पहुंच गयी। जेल के बडे फाटक के खुलने की आवाज भी आयी। थोडी देर के पश्चात चन्द्रकान्त के यार्ड के वार्डर के भागने की आहट उसे मिली। यार्ड के ताले ने और लोह के फाटक ने आवाज की वह उसने सुनी। चन्द्रकान्त ने करवट बदल कर उधर देखा। हाथ में लंबा टार्च लिए जेलर साहब का प्रवेश हुआ। सुपरिन्टेन्डेंट साहब भी पीछे दिखाई गये। वार्डर ने सिरको हाथ लगा सलाम किया। उनके भीतर आने पर फाटक बन्द किया। ताला लगाया। दौडकर दोनों के आगे चलने लगा। कंदील का प्रकाश टार्च के प्रकाश में मन्द होगया। वार्डर का प्रभाव अधिकारियों के सन्मुख फीका पड गया। सुपरिन्टेन्डेन्ट और जेलर दोनों यार्ड में घूमते हुये चन्द्रकान्त के पलंग के पास से निकल गये। चन्द्रकान्त बिना बोले, बिना हिले अपनी मच्छरदानी के झरोखो में से उनकी ओर देखता रहगया। घूम कर के वे चले गये। फाटक फिर खुला और बन्द होगया। चन्द्रकान्त के मन में विचार आया "जेल अधिकारी राऊंड के लिए आये। इस वार्ड में भी निरीक्षण किया। हम तो सत्याग्रही हैं। हम कभी भागनेवाले नहीं। फिर भी वार्डर का व्यर्थ पहरा और अधिकारियों का रातको भ्रमण।" चन्द्रकान्त ने स्वयं ही उत्तर दे दिया। "उनका कार्य हमारे सिद्धांतों या व्यवहार के अनुसार थोडे ही चलता है। उनका कार्य तो उनके नियमों के हिसाब से चलता है। हमारे नियमों से हमारा जेल आगमन है और उनके नियमों से जेल की रक्षा।"

रात्रि की बाल्यावस्था का अन्त होकर उसकी प्रौढ अवस्था की स्थिति आगई है। उसकी भयानकता की वृद्धि का भान है। समीर का संचार

विवेक या निर्बलता

चल रहा है पर कुछ शीतलता की मात्रा बढ गयी है। पृथ्वी का गमन जारी है। पर उसका स्थानान्तर होगया है। तारों का वही हाल है पर वहाँ भी स्थान परिवर्तन है। आकाश नीलिमां से दीप्तिमय है ही। सामुहिक विश्व नाटक में हर पात्र अपने अपने अभिनय में रत है।

दमोह जेल
३०-१२-४४
से
९-१-४५

कैदीकी सेवा

अपने प्रियतम अंधकार को ले निशा अस्ताचल के नीचे चली गई है। दिन-मणि अपने प्रकाश पुत्र के साथ उदयाचल से उपर आ गया है। अंधकार से भयभीत पशु पक्षी अपने आश्रय स्थानों से बाहर आ रहे हैं। प्रकाश से भीत प्राणी अपने रक्षा स्थान को चले गए हैं। स्वहित की

प्रेरणा सबको चलायमान कर रही है। बछड़े के प्रेम से आकृष्ट हो गाय दूध दे रही है। संक्षेप में सारा चेतन जगमय से भाग रहा है, स्वहित या स्वार्थ से प्रेरित है और प्रेम के आकर्षण में प्रवाहित है।

विशाल बंदी गृह का आहता। गुन्हेखाने का स्थान। बन्दीखाने में भी गुन्हाखाना। बाहर के अपराधों के लिए बन्दी गृह। बन्दी गृह के अपराधों के लिए गुन्हाखाने और गुन्हाखाना के अपराध के लिए डंडा बेडी का बंधन और न मालूम क्या क्या साधन। अपराध मालिका के साथ शिक्षा मालिका! अपराध के अन्दर भी गुन्हा और शिक्षा के भीतर भी सजा।

निरंजन अपने गुन्हाखाने के छोटे से आंगन के किवाड ढंके चर्खे का आश्रय ले समय बिता रहा है। भय का इस समय उसके पास प्रवेश नहीं है। रात्रि में सोता है तब मच्छरों या अन्य जीव जंतुओं के भय से वह अपनी मच्छरदानी को चारों ओर से ठीक दबा लेता है। अभी तो स्वहित या राष्ट्र हित की प्रेरणा से वह सूत कातने में लगा है। इस कताई में प्रेम का आकर्षण भी है। अपने हाथ से काते सूत की साडी पत्नी के लिए बनवाने का उसका विचार है अतः कताई के हर तार में प्रेम का संगीत है। सूत महीन तथा सम निकले इसका भरसक प्रयत्न है। तार जब बारीक, समान और अखंड निकलता है तो उसके मन में प्रसन्नता का स्वल्प श्रोत बह जाता है। उसकी एक ही कृति में स्वार्थ और प्रेम दोनों का सम्मिलन है।

दरवाजे का धक्का देकर चन्द्रकान्त भीतर आया। उसका चेहरा क्रोधमय व्यथा से चर्चित है। उसकी चाल में उत्तेजना है। दरवाजा खुलते ही निरंजन ने चन्द्रकान्त की ओर देखा। उसकी कताई की गति में जरा मंदता आई। चन्द्रकान्त क्षण में समीप आया।

निरंजन ने कहा आइए! आज सबेरे ही आगए। क्यों कोई खास काम है। चेहरे पर ग्लानि क्यों है। अभी स्नान नहीं हुआ दिखता। बैठो।

चन्द्रकान्त ने खड़े ही कहा—स्नान करता कहां से? नौकर मेरा काम करता ही नहीं। कितनी बार उसे कहा। दूसरों का ही काम करता रहता है। यही बात तो मैं कहने आया हूं कि यह सब क्या है।

निरंजन— क्यों? भैया! तुम्हारा काम क्यों नहीं करता। दूसरों का ही काम क्यों करता रहता है?

चन्द्रकान्त— कारण मैं न्याय से और सभ्यता से व्यवहार कराना चाहता हूं! दूसरे न सभ्यता मानते हैं और न न्याय जानते हैं।

निरंजन— याने मै समझा नहीं! पर जरा बैठ जाओ। बैठकर बातें करें। पहिले भी इस विषय में एक बार तुमने कुछ कहा था। आज जरा इस बात को समझ लें और सारी परिस्थिति पर विचार कर लें। बैठो।

चन्द्रकान्त बैठ जाता है। निरंजन चरखा कातना बंद कर देता है। चन्द्रकान्त की ओर देखकर कहता है। हां! कहो तुम्हारा क्या कहना है।

चन्दकान्त— आध घन्टा हो गया मै नहाने के लिए खड़ा हूं।

निरंजन—क्यों?

चन्द्रकान्त—नौकर को तीन बार कहा नल से पानी लाकर मेरी बाथरूम में रख, पर वह ध्यान देता ही नहीं। औरौं का ही काम करता रहता है। रोज यही खटखट होती है।

निरंजन—क्या कारण है वह तुम्हारा काम नहीं करता, दूसरों का काम करता रहता है।

चन्द्रकान्त—या तो वह उनका काम करता है जो दिन भर उसे डांटते हैं और गाली देते रहते हैं या उनका जो उसे बीड़ी आदि का लालच दे दिया करते हैं।

निरंजन—तब तुम भी उन्हीं मार्गों का अवलम्बन कर उससे काम क्यों नहीं करवा लेते।

चन्द्रकान्त जरा चिड़कर—तुम भी यही सलाह देते हो ?

निरंजन—क्यों ? इसमें क्या हो गया ? इन मार्गों से काम होते हैं और तुम्हें काम करवाना है।

चन्द्रकान्त—काम करवाना है पर अनुचित मार्गों का अवलम्बन करके नहीं।

निरंजन—क्यों ? इसमें क्या अनुचितता है ?

चन्द्रकान्त—आज तुम किस प्रकार की बात कर रहे हो ! ये दोनों मार्ग हमारे जीवन सिद्धान्तों के प्रतिकूल हैं। इनका अवलम्बन करना याने अपने सिद्धान्तों को त्यागना है।

निरंजन—किस तरह ?

चन्द्रकान्त—सदा तुम मुझे समझाते हो ! आज क्या मैं तुम्हें समझाउं ? इतनी देर नौकर ने सताया। उसका निवारण करवाने के लिए तुम्हारे पास आया तो तुम्हारा 'क्रास एक्जामिनेशन' शुरु हो गया।

निरंजन—नहीं भैया ! मैं क्रास एक्जामिनेशन नहीं कर रहा हूं। मैं तुम्हारी व्यथा निवारण की दवाई खोज रहा हूं। तुम्हारे रोग के सारे लक्षण जान लूं। उसका निदान कर लूं, तो फिर दवा भी बता सकूं ! बताओ इन मार्गों में क्या अनुचित बात है।

चन्द्रकान्त—अच्छा ! एक तो डांट दिखाना और दूसरा लालच देना। दिन भर डांटते रहना, डराते रहना, अपशब्दों का प्रयोग करते रहना, जेल अधिकारियों के पास रिपोर्ट करने की धमकी देते रहना, इस प्रकार भय या डर से काम करवाना उचित ही नहीं पर अपशब्दों का उपयोग करना तो असभ्यता है। तुम सदा कहा करते हो कि अपनी भाषा का ध्यान रखा। मै इस असभ्य मार्ग का अवलम्बन नहीं करना चाहता और साथ ही भय से भी किसी से काम नहीं लेना चाहता। दूसरा मार्ग लालच देना। यह मार्ग भी अनुचित है। किसी को लालच देकर ब्रायबरी देकर, उससे काम करवाना दोनों की मनुष्यता का अपमान है। यह भी अनैतिक मार्ग है। क्यों ठीक है न ?

निरंजन—ठीक मानकर चलें ! पर यह तो बताओ की इन मार्गों का अवलम्बन न करने के लिए तुम्हें किसने कहा ? अपने साथियों ने या इन कैदी नौकरों ने ?

चन्द्रकान्त—कहता कौन ? यह मेरा अपना निर्णय है। मैं अपना जीवन अपने सिद्धान्तों के अनुसार चलाना चाहता हूं।

निरंजन—बिल्कुल ठीक। पर एक बात और जिसकी तरफ तुम्हारा ध्यान नहीं गया।

चन्द्रकान्त—कौनसी ?

निरंजन—तुमने देखा होगा कि प्यारेलाल का सारा काम भी कैदी लोग दौड दौड कर करते हैं।

चन्द्रकान्त—हां।

निरंजन—वह न तो भय के मार्ग का अवलम्बन करता है और न देता है बीडी आदि का लालच। क्यों ठीक है ना?

चन्द्रकान्त—हां ठीक है।

निरंजन—फिर उसका काम नौकर क्यों करते हैं?

चन्द्रकान्त—कारण उनके साथ वह दिन भर गपशप किया करता है। घंटों उनके पास बैठकर उनका मन बहलाया करता है।

निरंजन—याने उनके साथ प्रेम और समानता का व्यवहार करते रहता है।

चन्द्रकान्त—अच्छी भाषा में यह कह सकते हो।

निरंजन—फिर तुम इस मार्ग का उपयोग क्यों नहीं करते?

चन्द्रकान्त—तब मैं अपना मूल्यवान समय इन मूर्ख, अशिक्षित और गलिच्छ कैदियों के साथ बैठकर खोऊं? अपनी पढाई लिखाई छोड यह जीवन बरबादी का काम करुं? फिर हमें अपने बराबरी वालों के साथ बैठना उठना है। कैदियों के साथ व्यर्थ की बातें करते रहना यह छोटे मन का लक्षण है। मैं इस कार्य को नहीं कर सकता। तुम स्वयं उनके साथ क्यों नहीं खेलते कूदते?

निरंजन—कैदियों के साथ इस प्रकार का व्यवहार न करने के लिए तुमसे किसने कहा है ?

चन्द्रकान्त—फिर वही बात ! मुझे कहता कौन ! यह मेरा अपना स्व-निश्चित जीवन मार्ग है।

निरंजन—अच्छा ! बिल्कुल ठीक ! अभी तक जो विचार किया उससे हमने देखा कि कैदी साधारणतया उसका काम करते हैं जिसका उन्हें भय लगता है या उसका काम करते हैं जिससे उनको कुछ मिलता है या उनका स्वार्थ साध्य होता है या उसकी सेवा करते हैं जो उन पर प्रेम करता दिखाई देता है।

चन्द्रकान्त—हां ! यह तीन कारण प्रधान दिखाई देते हैं।

निरंजन—तब हम यह कह सकते हैं कि नौकरों के जीवन के प्रेरक तीन कारण हैं। भय उन्हें भगाता है, स्वार्थ या स्वहित उन्हें प्रेरणा देता है और प्रेम उन्हें आकर्षित करता है। चन्द्रकान्त। यदि हम देखेंगे तो सारी चेतन सृष्टि में भी यही अवस्था दिखाई देगी। तुम्हारे हमारे जीवन में भी यही तीन कारण कम अधिक प्रमाण में क्रियाशील दिखाई देंगे।

चन्द्रकान्त—हां ! प्रायः यही दिखाई देता है।

निरंजन—तुम भय का उपयोग कर नौकरों से काम नहीं लेना चाहते ?

चन्द्रकान्त—बिलकुल नहीं। इस मार्ग का अवलम्बन मेरी मनुष्यता का नाश कर देगा। मेरी सभ्यता पर पानी फिर जायगा।

निरंजन—ठीक है। तुम उन्हें बीडी आदि चीजें देकर भी उनसे काम नहीं करवाना चाहते ?

चन्द्रकान्त—नहीं, यह तरीका अनैतिक है। लालच देकर काम करवाना अनुचित है। फिर लालच देकर मैं अपना काम करवा लूं तो दूसरों के काम की वह उपेक्षा करेगा। इस मार्ग से मैं अपने तथा अपने साथियों के साथ अन्याय करूंगा।

निरंजन—यह भी सही है। तुम उनसे प्रेम का व्यवहार कर भी उनसे काम नहीं करवाना चाहते।

चन्द्रकान्त—मैं उन पर प्रेम करता हूं। उन्हें मनुष्य समझता हूं और उनका आदर करता हूं। इसीलिए भय गाली आदि का उपयोग नहीं करता। परन्तु प्यारेलाल जिस प्रकार का प्रेम करता है उस प्रकार का प्रेम मैं नहीं कर सकता। निरंजन, मेरी सभ्यता, मेरा मानसिक विकास तथा समय का उपयोग करने की मेरी मनोवृति मुझे इस मार्ग का अवलम्बन नहीं करने देती।

निरंजन—इस प्रकार का व्यवहार करने के लिए तुमसे तुम्हारे साथियों ने कहा या कैदियों ने कहा ?

चन्द्रकान्त—वे मुझे क्यों कहने लगे और वे मुझे कहने वाले होते भी कौन हैं ?

निरंजन—उन्होंनें तुम्हें यह भी नहीं कहा कि भय लालच आदि मार्गों का अवलम्बन न करो।

चन्द्रकान्त—फिर वही बात वह कहने वाले होते कौन हैं ?

निरंजन—तब तुम अपने मार्ग का अवलम्बन और अन्य पंथ का अनावलम्बन किसके कहने से करते हो ?

चन्द्रकान्त—दो बार कह दिया ! अपने निज के निर्णय से ! यह मेरा स्व-निश्चित जीवन पथ है !

निरंजन—यह रास्ता तुमने स्वीकार क्यों किया है ? भय आदि के मार्ग का अवलम्बन क्यों नहीं करते ?

चन्द्रकान्त—यह जीवन का उच्च पथ है। वह निकृष्ट। यह लाभदायक वह हानिकर। यह मानसिक शांतिदाता और वह मानसिक अशांति का उत्पादक।

निरंजन—तब तुम्हारा जीवन तुम्हारे अपने निश्चित मार्ग से चलता है। वह मार्ग तुम अपने लिए हितकर मानते हो !

चन्द्रकान्त—बिल्कुल सही !

निरंजन—चन्द्रकान्त। इतने विवेचन से हमने तुम्हारे व्यवहार के हेतु को समझा। तुम्हारा हेतु उच्च है और उसके अनुसार तुम्हारी कृति है। अब हम अपने साथियों के तथा इन कैदियों के व्यवहार और हेतु का भी अवलोकन कर लें। हरेक का व्यवहार उसके अपने हेतु के अनुसार होता है।

चन्द्रकान्त—कर लीजिए। आज स्नान रह ही गया। विचार-स्नान ही हो जाय।

निरंजन—ठीक। पहले अपने साथी।

चन्द्रकान्त—हां।

निरंजन—विचार करने के पहले यह कह दूं तो उचित होगा कि अन्यों के जीवन हेतु तथा व्यवहार के विषय में सही चर्चा उनके साथ चर्चा कर उनका दृष्टिकोण तथा लक्ष समझ कर ही हो सकती है। हम तो उनको किसी प्रकार का दोष न देते हुए हमारी दृष्टि से विचार कर रहे हैं।

चन्द्रकान्त—दोष का कोई कारण नहीं है। यद्यपि अनेक बार मेरे मन में उनके व्यवहार की अयोग्यता के विचार आते हैं और कभी तो किंचित् क्रोध भी।

निरंजन—पर अभी तो हम तटस्थ की अवस्था में विचार कर रहे हैं। इस मनोवृत्ति में ही शुद्ध विचार विनिमय हो सकता है।

चन्द्रकान्त—सही है! भावना से व्याप्त विचार अस्पष्ट या धुंधला हो जाता है। भावना से अलिप्तता में ही विचार की शुद्धता है, इसे मैं मानता हूं। आज इस निर्मल मनोवृत्ति से ही विचार करना चाहता हूं।

निरंजन—बिल्कुल ठीक! इसी मानसिक अवस्था में हमें विचार करना चाहिए ताकि हम योग्य और निष्पक्ष निर्णय पर पहुंचें।

चन्द्रकान्त—मैं मानता हूं। मैं आया तब मेरा मन उत्तेजित अवश्य था पर अब समय के जाने से और विचार की मनोवृत्ति पैदा होने के कारण मैं अपने आपको उद्वेग विहीन तथा शांत पाता हूं। हम विचार विनिमय को आगे बढावें। हम साथियों के व्यवहार का निरीक्षण कर रहे थे।

निरंजन—हमारे साथी उनके अपने व्यवहार को स्वयं क्या समझते हैं। उचित मानते हैं या अनुचित, सभ्य समझते हैं या असभ्य, अपने मूल्यवान समय का सदुपयोग समझते हैं या दुरूपयोग आदि बातों का हम निर्णय नहीं कर सकते।

चन्द्रकान्त—क्यों भला! जो अनुचित है वह सबके लिए अनुचित है।

निरंजन—कुछ अंश में यह ठीक है पर सम्पूर्णतया नहीं।

चन्द्रकान्त—क्यों ?

निरंजन—मूल में कोई व्यवहार उचित है या अनुचित कहना कठिन है। उसका निर्णय निर्णयकर्ता के सिद्धान्त और कृति के परिणाम से ही किया जा सकता है।

चन्द्रकान्त—तब तो स्थायी सत्य, न्याय या सभ्यता का तुमने अंत ही कर दिया।

निरंजन—यह प्रश्न अत्यंत वादग्रस्त तथा गहन है। इसका किसी दिन अलग ही विचार करेगें। आज तो हमारी सीमा में ही हम विचार करें।

चन्द्रकान्त—याने ?

निरंजन—तुम मानते हो कि भय का उपयोग कर काम करवाना अनुचित है। पर यदि भय से काम करवाने वाला हमारा साथी मानता है और यही उसका जीवन सिद्धान्त है कि संसार में हिंसा से ही काम

चलने वाला है। सर्व साधारण जनता से काम करवाने का उपाय हिंसा का प्रयोग ही है और वह उसके अनुसार व्यवहार करता है तो उसकी कृति दोष पूर्ण नहीं। उसका तत्वज्ञान भले ही गलत हो। अपनी मान्यता या निज के सिद्धान्तों के अनुसार कृति यह व्यवहार की व्यक्तिगत शुद्धता का प्रथम लक्षण है।

चन्द्रकान्त—पर उसकी कृति सामाजिक मान्यता या सामाजिक हित के प्रतिकूल होगी तो ?

निरंजन—समाज की निगाह में वह हीन समझा जायगा और आवश्यकता तथा शक्ति हुई तो समाज उसे दंड भी देगा। हर एक को अपनी कृति के परिणाम का फल भोगने की तैयारी रखनी चाहिए। यदि हमारी मान्यता के अनुसार कृति करने की हममें क्षमता है तो उसके परिणाम को सहर्ष सहन करने की शक्ति भी चाहिए। दोनों के सामंजस्य में ही जीवन की शुद्धता और शक्ति है। यही मानव जीवन है। चन्द्रकान्त !—हम फिर विशाल दायरे में जाने लग गए। अपनी सीमा क्षेत्र में ही रहना चाहिए ताकि वर्तमान विचार धारा के अंत तक शीघ्र पहुंचें अन्यथा अनंत विश्व में समस्याओं और प्रश्नों की अनंतता है। समाज के आरम्भ से आज तक समस्याओं का जाल बिछा ही है और समय समय पर उसे सुलझाने का कम अधिक सफल प्रयास मानव करता ही आया है। तो हम कहां पर थे !

चन्द्रकान्त—निरंजन। प्रश्न इतना मनोरंजक और आकर्षक होता जा रहा है कि मैं अपना स्नानादि भूल गया हूं। शीघ्रता का कारण नहीं है। हम विस्तार से ही विचार क्यों न करें ? जेल में खास काम भी क्या है ?

निरंजन—भैया ! तुम्हारी लगन सराहनीय है पर हमें विस्तार को भी तो सीमित ही रखना होगा। अनियंत्रित विस्तार विनाश हो जाता है। हम एक सवाल से दूसरे सवाल पर भटका ही करेंगे तो अपने निश्चित स्थान पर नहीं पहुंचेंगें। हमारे विस्तार का दायरा हमारे लक्ष्य के अनुकूल होना आवश्यक है। आज हमारा विचार केन्द्र है नौकर की सेवा का सवाल और उसकी ओर ध्यान रखकर ही चलना होगा।

चन्द्रकान्त – ठीक है ! पर जरा दो वाक्यों में व्यक्तिगत उचितता और सामाजिक उचितता का स्पष्टीकरण कर दें ! पश्चात् हम अपने मूल विषय की ओर आजाएंगें।

निरंजन—अत्यंत संक्षेप में कह दूं ! अपने निज के स्वीकृत तत्वों के अनुसार किया व्यवहार मौलिक उचितता रखता है। सामाजिक नियमों या मान्यताओं के अनुकुल वर्तन सामाजिक उचितता का द्योतक है। प्रायः जीवन की सर्व साधारण अवस्थाओं में व्यक्तिगत और सामाजिक मान्यता एक से ही रहते हैं। इसी कारण कार्य का सामाजिक और मौलिक औचित्य एक साथ चलता है। कई बार अवसर आजाता है जब व्यक्तिगत मान्यता और सामाजिक स्वीकृत व्यवहार में विरोध पैदा हो जाता है। ऐसे ही अवसरों पर व्यक्ति की शक्ति या महानता का परिचय मिलता है। बलवान अपने तत्वों के अनुसार व्यवहार करता है और उसका परिणाम सहन करने की सहर्ष तैयारी रखता है। निर्बल अपने सिद्धान्तों को त्याग कर सामाजिक व्यवहार की शरण लेता है। प्रथम व्यक्ति का कार्य मौलिक रूप से उचित है पर सामाजिक निगाह से अनुचित। दूसरे व्यक्ति का कार्य सामाजिक निगाह से उचित तो मौलिक दृष्टि से अनुचित। ऐसे भी व्यवहार रहते हैं जहां समाज

हस्तक्षेप नहीं करता पर वहां मौलिक औचित्य का सवाल बना ही रहता है। हम अपने जीवन में मौलिक औचित्य की ओर जितना ध्यान देंगे उतना ही जीवन उन्नत और शक्तिशाली बनेगा। चन्द्रकान्त! बस, इसके अनेक भेद, उपभेद और विचार शाखाएं पैदा होगी। इसी में से सवाल निकलेगा कि व्यक्ति समाज के लिए या समाज व्यक्ति के लिए। आज हमें अपने दायरे में रहकर ही विचार करना चाहिए। हमने भय से काम करवानेवाले मित्र की मनोवृति का अवलोकन किया। वह अपनी उसकी निगाह में उचित हो सकता है यह उदार अवलोकन भी हमने किया।

चन्द्रकान्त—ठीक और लालच देनेवाला।

निरंजन—वह भी उसकी अपनी निगाह से उचित हो सकता है।

चन्द्रकान्त—लालच भी उचित।

निरंजन—हां। यदि कोई व्यक्ति इस पवित्र इच्छा से कि इन बिचारे कष्टित कैदियों को बीडी के अभाव में दुख होता है अतः उसके निवारणार्थ उन्हें बीडी देता हो या यह मानकर कि उन्हें अपने समान रखने का प्रयत्न करूं, उन्हें खाने पीने आदि का सामान भी देता है तो उस साथी का व्यवहार मौलिक रूप में योग्य है।

चन्द्रकान्त—पर सामाजिक परिणाम।

निरंजन—हम व्यक्ति की निगाह से विचार कर रहे हैं। मैंने कहा है कि किसी की कृति की योग्यता का निर्णय उसके सिद्धान्तों को जाने बिना नहीं किया जा सकता। जैसा हमने तुम्हारे व्यवहार को तुम्हारे अपने सिद्धान्तों के अनुसार देखा, सम्भव है तुम्हारा व्यवहार तुम्हारे साथियों को अच्छा न लगता हो।

चन्द्रकान्त—सही है। कुछ साथी सचमुच मेरे व्यवहार पर टीका टिप्पणी करते हैं। अच्छा तो प्यारेलाल की समय बरबादी में भी कोई तत्व हो सकता है।

निरंजन—क्यों नहीं ?

चन्द्रकान्त—मतलब हर भली बुरी बात के पीछे कुछ सिद्धान्त हो सकता है। ढूंढ निकालो प्यारेलाल का भी उचित सिद्धान्त।

निरंजन—प्यारेलाल भी यह मानकर कि इन दुखी कैदियों के साथ बैठकर बातचीत करने से उनके मन को शान्ति मिलती है, कुछ अच्छी बातों का प्रचार करने को मिलता है, कैदियों के जविन को सुधारने का स्वल्प प्रयत्न हो सकता है, जहां और जिनके बीच हम रहते हैं, उनके समान हमको रहना चाहिए इस तत्व का अवलम्बन हो सकता है, अपनी व्यक्तिगत उन्नति की अपेक्षा जनता के साथ हमें समरस होकर रहना चाहिए, इस तथा दूसरे उदार भावों को लेकर प्यारेलाल उस प्रकार का व्यवहार कर सकता है। इस दृष्टि से उसका व्यवहार योग्य ही हो सकता है। फिर तुमने देखा होगा कि प्यारेलाल केवल अपने नौकरों से ही बातचीत नहीं करता पर यार्ड के सारे कैदी उसके पास बैठते हैं। बातचीत करते हैं और उसके सहवास में सुख का अनुभव करते हैं।

चन्द्रकान्त—तब इसका अर्थ यह हुआ कि किसी की केवल कृति को देख दोष देने का हमें अधिकार ही नहीं है।

निरंजन—यदि दोष की जड मनोवृत्ति है तो केवल कृति को देख दोषी निर्दोषी का निश्चय नहीं किया जा सकता। समान कृति के पीछे भिन्न मनोवृति हो सकती है।

चन्द्रकान्त—मतलब ?

निरंजन—समझो, रास्ते चलते दो व्यक्तियों को किसी पहलवान ने दो धक्के लगा दिए। दोनों के दोनों बिना प्रतिकार हटकर आगे चले गए। उनमें से एक अहिंसावादी है अतः उसने बलवान मनोवृति से उसका प्रतिकार नहीं किया। दूसरा हिंसा में विश्वास करता है पर भय के कारण प्रतिकार करने का साहस पैदा न कर सका। दोनों का व्यवहार एक सा हैं पर पहला अपने सिदान्त के अनुसार उचित तथा बलवान है और दूसरा मूलतः निर्बल तथा अनुचित है। अब रहा सामाजिक सवाल। अन्य व्यक्तियों को उनकी अपनी दृष्टि तथा सिद्धान्तों के अनुसार दूसरों की कृति का विचार करने का अधिकार है।

चन्द्रकान्त—हम भी व्यक्तियों की निगाह को छोड अपनी निगाह से विचार करें।

निरंजन—उससे अभी हमें क्या लाभ होगा। मानलो हमारी निगाह से उनका व्यवहार अनुचित है तथापि उनकी अपनी निगाह से वे उसे उचित समझ या हमारी निगाह की उपेक्षा कर वे अपना व्यवहार करते आए है और करते रहेंगे, जैसा कि तुम अपना व्यवहार उचित समझते हो और तुमने अभी कहा कि कुछ साथी उसे ठीक नहीं मानते हैं पर उनकी परवाह न कर तुम अपना आचार बनाए रखते हो। हम दोनों समान होगए। अतः इस प्रश्न को हमें यहीं छोड देना चाहिए और विचार करना चाहिए दूसरे प्रश्न का कि ये कैदी हमारा काम क्यों नहीं करते।

चन्द्रकान्त—अच्छा। यही प्रश्न हमारा आज का विषय है।

निरंजन—तुमने यह तो बताया कि ये कैदी तुम्हारी सेवा क्यों नहीं करते पर अब यह बताओ कि ये कैदी तुम्हारी सेवा क्यों करें ? तुम्हारा काम क्यों करें ?

चन्द्रकान्त—यह खूब ! कारण जेल अधिकारियों ने उन्हें इस काम के लिए नियुक्त किया है। यह उनका कर्तव्य है।

निरंजन—जेल अधिकारियों द्वारा की नियुक्ति और उनका कर्तव्य। पहले कर्तव्य को जानलें।

चन्द्रकान्त—हां देखलें।

निरंजन—स्वयं निर्णित कार्य को जब व्यक्ति बिना किसी दबाव के प्रसन्नता के साथ करता है तब वह कार्य कर्तव्य कहलाता है। इन कैदियों ने तुम्हारी सेवा करने का स्वयं प्रेरणा से कोई निर्णय नहीं किया है। न उन्हें तुम्हारी सेवा करने में कोई प्रसन्नता है। उनकी इच्छा के प्रतिकूल ही उन्हें तुम्हारे काम के लिए नियुक्त किया गया है।

चन्द्रकान्त—पर उहोंने अपराध किया इसलिए उन्हें जेल में रखना आवश्यक था।

निरंजन—हम अभी उनको जेल में रखने की आवश्यकता या अनावश्यकता तथा औचित्य या अनौचित्य इन बातों पर विचार नहीं कर रहे हैं। जेल में तो हमें भी रखा गया है। वर्तमान राज्यकर्ता की निगाह से हम अपराधी हैं पर हमारी अपनी तथा भारतीय समाज की दृष्टि से हमारा जेल में रखा जाना अनुचित है। उसी प्रकार इन कैदियों में से भी कइयों की मान्यता वर्तमान अपराध प्रणाली से भिन्न हो सकती

है। आज हम इस विषय का विचार नहीं करते। हमारे सामने तो सवाल है उनकी स्वच्छा का। वे स्वंय अपनी इच्छा से जेल नहीं आए तथा तुम्हारा काम करने की भी उनकी निज की इच्छा नहीं हैं। उन्हें इच्छा के प्रतिकूल जेल लाने पर भी यदि उनकी इच्छा पर ही छोड दिया जाय तो वे केवल तुम्हारी सेवा करने की पवित्र भावना से इस यार्ड में काम करने नहीं आयेंगे। स्वेच्छा से अन्यों की सेवा, अन्यों की आज्ञा का पालन तथा अन्यों की इच्छा के अनुसार परिश्रम करना कौन मनुष्य पसन्द करेगा? समाज की असमान और हिंसामय व्यवस्था में ही ये सारी बातें आज हो रही हैं। तुम्हारी सेवा यह किसी कैदी का कर्तव्य नहीं हो सकता। तुम्हारी सेवा को परोपकार की उच्च भावना से कोई कैदी क्यों देखे?

चन्द्रकान्त—कुछ अंश में यह ठीक है पर साथ ही यह भी सही है कि इस यार्ड में काम करने के लिए आना अनेक कैदी पसन्द करते हैं। यहां एक बार आने के पश्चात् दूसरी ओर जाना नहीं चाहते। इस स्थिति में तो उनका कार्य स्वेच्छाकारी हो जाता है न!

निरंजन—तुम कहते हो वह अवस्था है पर इस कृति के पीछे की मनोवृत्ति में प्रसन्नता तथा स्वाभाविक सेवा की इच्छा नहीं है। इस यार्ड में सर्व साधारण जेल के वातावरण की अपेक्षा कुछ अधिक सुविधाएं मिल जाती हैं। चक्की आदि कठोर कामों से यहां के काम कुछ हल्के रहते हैं। जेल में काम करना अनिवार्य ही है तो फिर हल्का और सुविधा का ही काम किया जाय इस स्वहित की भावना से वे यहां आना पसन्द करते हैं। यहां काम करने के लिए आने में उनका स्वहित या निज कल्याण न हो तो कोई कैदी अपनी इच्छा से यहां काम करने नहीं आएगा। यहां आने की इच्छा या मांग स्वहित की प्रेरणा का परिणाम है।

चन्द्रकान्त—यदि काम करना उनकी इच्छा के प्रतिकूल है तो वे काम करने आते ही क्यों हैं ?

निरंजन—जिन्हें सख्त मजूरी की सजा हुई है उन्हें जेल में काम करना अनिवार्य है। यदि वे काम करने से इन्कार करें तो दंड मारपीट या हिंसा के अन्य उपायों का अवलम्बन कर उन्हें काम करने के लिए बाध्य किया जा सकता है। जेल के सारे बंदी बलात्कार के भय से काम करते हैं। यदि जेल अधिकारियों का और दंड का भय न हो तो एक भी कैदी काम न करे। तुम्हारे यार्ड में भी काम करने कोई न आवे। यह मानना होगा कि यहां की सेवा कैदियों का कर्तव्य नहीं। जेल अधिकारियों की नीति भय मूलक है और उससे डरकर ही कैदी काम करते हैं। तुम्हारा जो थोडा बहुत सबेरे सबेरे काम कर देते हैं वह भी जेल अधिकारियों के भय मात्र से।

चन्द्रकान्त—और दूसरों का दौडकर जो काम करते हैं वह भी क्या जेल अधिकारियों के भय से।

निरंजन—भय के अलावा अन्य कारण भी काम कर जाते हैं। जेल का सारा काम भय की बुनियाद पर है पर उसके साथ सामयिक अन्य कारण भी अपना असर पैदा कर देते हैं।

चन्द्रकान्त—याने ?

निरंजन—हमने अपनी बातचीत के आरम्भ में मनुष्य के कार्य करने के कारणों को स्थूल रुप से तीन श्रेणियों में विभक्त किया ! भय, स्वहित तथा प्रेम। इन तीनों कारणों का यहां की सेवा कार्य में भी सतत स्थान है।

चन्द्रकान्त—विस्तार से कहिए।

निरंजन—प्रथमतः जो साथी सदा भय का आतंक बनाए रखता है। जेल अधिकारियों के पास शिकायत करके दंड दिलवाने की तलवार सदा उनके सिरपर लटकाए रखता है; उसका कार्य कैदी मन मारकर भय के कारण करता है। दूसरे जो साथी बीडी, खाने-पीने आदि का सामान देता है, कैदियों की शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति में उन्हें सहायक होता है, उसके हाथ से उनका हित होता है इस कारण हित की भावना से प्रेरित हो वे उसका काम करते हैं। यह व्यवहार हैं। वह उनको देता है ओर कैदी उसको देते है। एक धन देता है और दूसरा बदले में सेवा देता है। बाहर भी हम नौकर को मूल्य या वेतन देते है। यहां वेतन का यह दूसरा रुप है। कैदी वेतन के उत्तरमें प्रसन्नता से काम करता है। तीसरा उदाहरण प्रेम का। जेल के शुष्क, भयाक्रांत, वियोग व्यथित वातावरण में बिचारे कैदियों को जहां ममत्व मिलता है, उनकी भावनाओं को लोरी मिलती है, जहां समानता दिखाई देती है जहां उनका मन बहल जाता है जहां उनके मन को शांति और सहारा मिलता है वहां कैदी भी ममत्व से या प्रेम से आर्कषित होजाता है। वहां काम करने मे उसे कुछ मानसिक सन्तोष मिल जाता है और जेल में भी वह कौटुम्बिक भावना का अस्तित्व पा जाता है। चन्द्रकान्त, इस प्रकार सारा व्यवहार चल रहा है यह तुम्हे मान्य हैं?

चन्द्रकान्त—हां भैया! यहां की परिस्थिति में तो तुम्हारा विवेचन ठीक दिखाई देता है।

निरंजन—भैया तब तुम बताओ कि वे कैदी तुम्हारी सेवा क्यों करें। तुम्हारे पास न भय का भंडार हैं और न तुम उनके मन को शांति

देने का काम करते हो। तुम्हारे पास तुम्हारा अपना अपने कल्याण का कर्तव्य मार्ग है। जिससे कैदियों को कोई लाभ नहीं।

चन्द्रकान्त—तब तुम्हारे ध्यान से कैदियों से किसी प्रकार की सेवा की अपेक्षा करने का मुझे अधिकार नहीं।

निरंजन—मैं यह नहीं कहता। अभी तक हमने यह देखा कि कैदी यदि दिल से सेवा नहीं करते तो उन्हें दोष देने का कारण नहीं है। न उनसे नाराज होने का और न अपने चित्त को व्यथित करने का। अब सवाल आया तुम्हारे अधिकार का जो तुमने अभी उपस्थित किया।

चन्द्रकान्त—क्यों अब वह सवाल कहां रहा। जब मुझे कैदियों को दोष देने का अधिकार नहीं तब सेवा का अधिकार कहां बचता है। कारण अधिकार के साथ तो दोष देने का हक आही जाता है।

निरंजन—ठीक है। हमें किसी से कोई अधिकार प्राप्त हो और वह उसे पालन न करता हो तो उसे दोष देने का हमें हक है।

चन्द्रकान्त—और हमने देखा कि दोष देने का मुझे अधिकार नहीं तब सेवा का अधिकार भी कहां।

निरंजन—जहां तक तुम्हारा और कैदियों का सम्बन्ध है वहां तक बहुतांश में यही अवस्था है। इस प्रश्न के बारीक भेद को हम छोड़ दें पर तुम्हारे अधिकार का एक दूसरा रुप या स्थान तो है न।

चन्द्रकान्त—अब यह नवीन रूप कौनसा निकला।

निरंजन—जेल अधिकारियों से तुम्हारा अधिकार प्राप्ति का स्वरूप ।

चन्द्रकान्त—याने ?

निरंजन—कैदियों से तुम अधिकार की बात नहीं कर सकते। उनके प्रति तुम्हें कोई सीधा अधिकार प्राप्त नहीं है पर जेल अधिकारियों से अपनी श्रेणी के अनुसार तुम्हें अधिकार प्राप्त हैं। जेल नियमों के मुताबिक तुम्हारे कुछ कामों के करने की व्यवस्था करना यह जेल अधिकारियों का कर्तव्य है। उन्हीं नियमों से तुम्हें अधिकार प्राप्त है कि उतनी सेवा की तुम्हारी व्यवस्था हो।

चन्द्रकान्त—पर जेल अधिकारियों ने मेरी सेवा के लिये कैदी दे दिया। यदि वह कैदी मेरा काम न करे तो अधिकार का अन्त होगया। मेरी सेवा के लिए कैदी की नियुक्ति करते ही जेल अधिकारियों से सेवा प्राप्ति का मेरा जो अधिकार था उसका अन्त होगया। हमारी अभी तक की बातचीत से यह निष्कर्ष निकला की कैदियों के साथ मेरा कोई अधिकार नहीं तब सारा निचोड निकला मेरी सेवा की समाप्ति ।

निरंजन—नहीं। तुम्हारी सेवा के लिए कैदी नियुक्त करते ही जेल अधिकारियों से जो अधिकार तुम्हें प्राप्त हैं उन अधिकारों की पूर्ति नहीं हो जाती। जेल अधिकारियों का यह भी कर्तव्य है कि वे इस बात को देखें कि कैदी तुम्हारी सेवा करता है।

चन्द्रकान्त—वे किस प्रकार देख सकते है ? यदि नियुक्त किया कैदी काम न करे तो वे क्या करें ?

निरंजन—अपने वार्डर द्वारा व्यवस्था करवा सकते हैं। करवाना उनका काम है।

चन्द्रकान्त—याने ?

निरंजन—एक वार्डर मुकर्रर किया जा सकता है जो इस बात को देखे कि नियुक्त किया कैदी तुम्हारा काम बराबर करता है या नहीं और नहीं करता हो उससे काम करवाए।

चन्द्रकान्त—इसका अर्थ यह कि मुझे जेल अधिकारियों से मेरे अपने अधिकार की रक्षा के लिए कहना चाहिए।

निरंजन—जिन के द्वारा हमारी अधिकार प्राप्ति है उनसे यदि कर्तव्य पालन की बात कही जाए तो कौन आपति है। हरएक आदमी अपने अधिकार की योग्य रक्षा नहीं करता इसी कारण समाज में अनेक अव्यवस्थाएं हैं।

चन्द्रकान्त—इसका परिणाम हमारे आपस के व्यवहार पर होगा। हमारे साथियों को मेरा यह कार्य अनुचित दिखाई देगा। साथ ही इतनी छोटी छोटी बातें जेलवालों से कहना मैं अपना छोटापन समझता हूं। एक बात और ! यदि मैं कहूं और वार्डर ही कैदी से काम करवावें तो सम्भव है वार्डर हिंसा का उपयोग करें तो बिचारे कैदी का जीवन दुखमय हो जाएगा। निरंजन ! मैं अपने सुख के लिऐ किसी को दुख नहीं देना चाहता। यह मार्ग भी मेरे लिए खुला नहीं है।

निरंजन—तब तुम्हारे लिए एक ही मार्ग है। सब के लिए वह उचित मार्ग खुला है कि अपने कार्यों का या अपनी जीवन पद्धति का परिणाम सहर्ष और बिना किसी को दोष दिए हुए भोगे।

चन्द्रकान्त—याने।

निरंजन—अपना काम करवाने के लिए जेल अधिकारियों से कहना तुम अपनी हीनता मानते हो, वार्डर द्वारा कैदी से काम लिया जाए तो

तुम्हारी कोमल भावनाओं पर आघात होता है, कैदी को डराकर काम करवाने में तुम्हारी मनुष्यता या सभ्यता पर आक्रमण होता है, कैदियों को कुछ देकर प्रेरित करना तुम्हारे तत्वों से टकराता है, प्रेम से आकर्षित करने में तुम्हारे बहुमूल्य समय की बर्बादी होती है, तब अब बताओ तुम्हारा काम किस प्रकार हो। तुम अपने सिद्धान्तों के अनुसार चलना चाहते हो, उसका पूरा लाभ उठाना चाहते हो और साथ ही चाहते हो कि तुम्हारा काम भी हो। अपना जरा भी दिए बिना तुम इच्छा करते हो कि प्रातःकाल ही समय पर पानी की बाल्टी तुम्हारे सामने आजाए। कौन लाए? तुम्हारी भावना! तुम्हारी मनुष्यता! तुम्हारे तत्व या तुम्हारे समय का सदुपयोग। अपने जीवन के तत्वों का लाभ ले लो या पानी की बाल्टी। तुम दोनों चाहते हो। अपना कुछ दिए बिना ही दूसरों से प्राप्त करना चाहते हो। दुनिया में यह कम सम्भव है। इसी लिए देखा जाता है कि महान व्यक्तियों को अल्प वस्तुओंका अभाव हो जाता है और छोटे व्यक्ति छोटी वस्तुओं को प्राप्त कर महान वस्तुओं के दर्शन तक नहीं कर सकते। विश्व में कारण और कार्य का सतत सम्बन्ध है। इस सारी परिस्थिति के लिए यदि अविकाश हो तो मैं कुछ उदाहरण भी दे दूं।

चन्द्रकान्त—भैया। अवश्य दो। इस विषय को जितना स्पष्ट कर सको उतना स्पष्ट करो। मेरे पास अभी समय है। मेरा मन विचित्र भंवर में आगया है और डांवाडोल है। तुम्हारे स्पष्टीकरण से ही वह किसी किनारे लग सकता है।

निरंजन—अच्छा हम कुछ उदाहरण लें।

चन्द्रकान्त—अवश्य!

निरंजन—कोई व्यक्ति यदि अपने उद्यान में आम, अंजीर, अंगूर आदि उत्तम फलों के ही वृक्ष लगाता है और कंटकमय बबूल को अपने उद्यान के समीप भी नहीं आने देता तो या तो उसे अपने उद्यान को कंटीले कूंजन के अभाव में अपने निज के प्रयत्नों से और सतत जाग्रति से सुरक्षित रखना होगा या आम अंजीर देकर कांटे खरीदना होगा। इस मार्ग का अवलम्बन कर सकता है या अपने उद्यान किनारे बबूल को स्थान दे अपनी कूंजन-व्यवस्था कर सकता है। अन्य उपाय नहीं। अपनी उचित वस्तुओं के अहंकार में कांटें मिलनेवाले नहीं है। और उदाहरण दे दूं?

चन्द्रकान्त—कौनसा !

निरंजन—हमने हमारे दूध में मीठी मिश्री डाली और हमारे साथी ने अपने दूध में खट्टा दही डाला। हमें हमारे मधुर रस पीयुष से सन्तोष मानकर दही के अभाव को सहर्ष स्वीकार करना होगा और हमारे साथी को दही खाकर मीठी डकार लेना होगा। और एक उदाहरण !

चन्द्रकान्त—कहिए।

निरंजन—किसी व्यक्ति की राजासे मैत्री हैं अतः वह द्वारपाल की उपेक्षा करता है। राजा का मित्र होने के नाते द्वारपाल से प्रेम करने में अपनी हीनता मानता है। द्वारपाल अपने स्थान पर महत्व रखता है। हमारे आगमन पर राजा तक पहुचाने में विलंम्ब कर सकता है। अन्य आगन्तुकों को जिससे द्वारपाल का प्रेम है वह पहले पहुंचा सकता है और वह व्यक्ति राजामित्र से पहले राजदरबार में प्रवेश पर सकता है।

चन्द्रकान्त—पर यह राजा का मित्र मिलने पर द्वारपाल को दण्ड करवा सकता है या हटवा सकता है।

निरंजन—याने भय का आश्रय ले सकता है या उसके स्वार्थ हरण का डर पैदा कर उससे काम करवा सकता है। यही तो हमने देखा है कि भय, स्वार्थ, प्रेम आदि मार्गों से काम करवाया जा सकता है। इनके अभाव में कार्य करवाना कठिन है। उपेक्षा की प्रतिध्वनि उपेक्षा ही होनेवाला है और अहंकार का आविर्भाव अहंकार को ही जगानेवाला है चाहे किसी प्रमाण में हो।

चन्द्रकान्त—ठीक है और कोई उदाहरण।

निरंजन—हां एक दो और दे दूं।

चन्द्रकान्त—उदाहरणों से ही तत्वों का सच्चा स्पष्टीकरण होता है।

निरंजन—अथाह पूर से प्रवाहित नदी का किनारा है। पार जाने के लिए तीर पर एक ज्ञानी मुनि हैं, एक व्यसनी व्यक्ति है और एक धीवर का अज्ञानी बालक। मुनि ने अपना सारा समय और शक्ति ज्ञान प्राप्ति में लगाई है। तैरना सीखने के लिए अपने अमूल्य समय का एक क्षण भी व्यर्थ नहीं गवायां है। व्यसनी पानी में कूद गया। अक्षर शून्य धीवर बालक भी जल पर क्रीडा करने लगा। देखते देखते दोनो परले तीर होगए। ज्ञानी मुनि अपने स्थान पर खडे रह गए। ज्ञानी का ज्ञानियों की मंडली में स्थान है पर जल के प्रवाह में तैरने की कला जाननेवाले व्यसनी और अज्ञानी का आदर हैं। व्यसनी और अज्ञानी तैरते है। ज्ञानी असहाय अपने स्थान पर खडा देखता है; वह किसे दोष दे। जल को व्यसनी को, अज्ञानी को, या स्वयं को। चन्द्रकान्त एक ओर उदाहरण दूं?

चन्द्रकान्त—अवश्य! आज तुम कहां ले जा रहे हो। मेरा शरीर स्नानहीन है पर मन को आज अथाह निमज्जन स्नान हो रहा है। कहो कौनसा उदाहरण हैं?

निरंजन—भारत में प्रायः प्राचीन मान्यता रही है कि सरस्वती और लक्ष्मी एक साथ नहीं। ज्ञान और धन का विरोध है। पर चन्द्रकान्त। ज्ञान और धन की अमैत्री नहीं है। सरस्वती और लक्ष्मी का आपसमे बैर नहीं है। हमने उनका आपस में नाता तोड रखा है। इसी कारण अनेक ज्ञानी तो निर्धन हैं और अनेक अज्ञानी कहलानेवाले धनी। कारण आराधना के अभाव में आकर्षण कहां। मानी के मानहीन आगमन की संभावना कहां। बिना आराधना के लक्ष्मी की कृपा क्यों हो। जो उसकी आराधना करते हैं उनके सानिध्य में वह रह सकती है। आराधना का मूल्य है न कि आराध्यक का। जो सरस्वती की आराधना में लीन है, लक्ष्मी को हीन समझते है। वे लक्ष्मी का मुख देखने की आशा तक क्यों करे।

चन्द्रकान्त—ठीक तो है।

निरंजन—एक और उपमा। सदा सर्वत्र वेश्या वृत्ति की निन्दा करने वाले समाज सुधारक किसी वेश्या के घर किसी अन्य काम के लिए या उसका सुधार करने को पवित्र भावना से भी पहुंच जाएं और अपने हीन जीवन में भी स्वाभिमान रखनेवाली वेश्या उनका आदर सत्कार तो दूर रहा, अपने स्थान से उठना परे रहा, उनकी ओर देखे तक नहीं पर उसी समय उससे प्रेम करने वाले, उसका आदर करनेवाले व्यक्ति के आते ही वह उठती है, सस्मित उसका स्वागत करती है तो यह समाज सेवक मित्र किसे दोष दे?

चन्द्रकान्त - आज तुम कितनी विलक्षण उपमाएं दे रहे हो। संसार में नैतिक बल भी कोई वस्तु है या नहीं।

निरंजन—यह प्रश्न अलग है। इसका फिर कभी विचार करेंगे। एक अन्तिम उदाहरण दे दूं।

चन्द्रकान्त—अच्छा।

निरंजन—एक महान सन्त अपनी ईश्वर भक्ति में जहां वहां सतत निमग्न रहता है। अपनी विवाहित पत्नि की साधारण आवश्यकताओं की ओर भी ध्यान नहीं देता। सन्त को ईश्वर चाहिए और पत्नि को सान्सारिक सुख। इस अवस्था में पत्नि अपने पति की उपेक्षा करती है, उसे भला बुरा कहती हैं, उसपर प्रेम नहीं करती और उसे त्याग कर भी चली जाती है तो दोष किसका? भक्त ईश्वर की आराधना करता है उसके दरबार में उसे स्थान मिल सकता है पर पत्नि के हृदय मे जगह किस प्रकार प्राप्त हो। भक्ति का परिणाम मुक्ति प्राप्ति हो सकता है न कि पत्नि का आदर, प्रेम और सेवा।

चन्द्रकान्त—निरंजन। तुम आज क्या कह रहे हो। महान कार्य में लगे हुए को अपने आत्मीय से किसी प्रकार की अपेक्षा करने का आधिकार नहीं। यही तुम्हारा सार है। महान कार्य मे लगे हुए का सहारा कौन।

निरंजन—महानों का सहारा उनकी महान कृति ही हो सकती है। महान कार्य में लगे हुए की यह आशा या अपेक्षा कि अन्य सब उनकी सेवा करें, सामाजिक औचित्य के भार से दबे हुए निर्बलों पर प्रभुत्व है या भावना के पवित्र ओर बलशाली बन्धनों से आकर्षित आत्मीयों का बे मालूम सूक्ष्म शोषण है। उनसे सेवा प्राप्त करने का तुम्हारा अधिकार तो है ही नहीं। वे यदि सेवा करदे तो यह उनकी कृपा है। चन्द्रकान्त! हमने इतने उदाहरण देखे। अब आज की बात के निर्णय पर पहुंचना चाहिए।

चन्द्रकान्त—जहां चाहे वहां पहुंचा दो। मैं तो कभी इस किनारे और कभी उस किनारे और कभी मझधार में बह जाता हूं। जिवन कितनी गुत्थियों से भरा हुआ है इसका अनुभव कर रहा हूं।

निरंजन—मैं समझता हूं हमारा निर्णय अब सहल है।

चंद्रकान्त—किस प्रकार।

निरंजन—प्रथमतः हमें स्वीकार करना होगा कि हर कृति का अपना फल है और हमें हमारी कृति के फल से ही सन्तोष मानना चाहिये। हम कृति हमारी करें और फल की आशा करें अन्यों की कृति के अनुसार यह अनुचित है। हम महान प्राप्ति का कार्य करें और अल्प की प्राप्ति न हो या एक प्रकार का कार्य करें और दूसरी वस्तु प्राप्त न हो तो असन्तुष्ट हो जाना यह जीवन का गलत रास्ता है। हमारी कृति और उससे प्राप्त परिणामों में ही हमें मस्त रहना चाहिए।

चंद्रकान्त—निरंजन। समझा! भविष्य में इसी मनोवृत्ति से काम लेने का प्रयत्न करूंगा।

निरंजन—तब तुम्हें अन्यों को दोष देने या अन्यों से असन्तुष्ट होने का अवसर क्वचित आएगा। पर चंद्रकान्त। इतनी बहस के बाद भी तुम्हारी बाल्टी भर पानी का सवाल तो रह ही गया।

चन्द्रकान्त—उसे भी हल करदो

निरंजन—हमने जो पहली बात देखी उसी में तुम्हारी पानी कि बाल्टी का निपटारा है।

चन्द्रकान्त—किस प्रकार।

निरंजन—हमने देखा कि ज्ञानी का ज्ञान वैतरणी भले ही पार करवा दे, पर पृथ्वी की छोटी सी नदी पार नहीं करवा सकता। सरस्वती की आराधना अन्न कष्ट निवारण नहीं कर सकती। राजा की मैत्री समय पर दरबार में नहीं पहुंचा सकती। सुधारक की समाज सेवा वेश्या से आदर प्राप्त नहीं करवा सकती। उसी प्रकार मनुष्यता आदि उच्च सिद्धान्त तुम्हें समय पर पानी की बाल्टी नहीं दे सकते।

चन्द्रकान्त—यह ठीक है। फिर क्या किया जाय।

निरंजन—या तो पानी की बाल्टी बिना, सहर्ष रहा जाय, नल पर जाकर स्नान किया जाय या अपने निज पुरुषार्थ का उपयोग कर नल से बाल्टी लाकर खूब शान से स्नान किया जाय। हमारे तत्वों की रक्षा और हमारे स्वालम्बन की स्थापना का और कोई मार्ग नहीं है। आज के सारे विचार विनिमय का यही सार है।

चन्द्रकान्त—बिल्कुल स्वीकार है। आज तुम्हारा कितना समय गया पर कितनी बातों का विचार होगया। आज के विचार से मुझे तो भारी लाभ हुआ है और मेरे जीवन की एक समस्या हल होगई है। मैं तुम्हें धन्यवाद किस प्रकार दूं।

निरंजन—भैया धन्यवाद का क्या सवाल है। आज के वार्तालाप से मुझे भी तो लाभ हुआ है। कितनी ही बातों का मेरे लिए स्पष्टीकरण होगया।

चन्द्रकान्त— क्यों? तुम्हारे पास तो ये विचार थे ही। तुम्हें क्या लाभ?

निरंजन—नहीं। यह बात नहीं है। मनुष्य के सारे विचार उसके सामने स्पष्ट नहीं रहा करते। कई विचार अंकुर या बीज रूपमें बने रहते हैं। वाद के जल सिंचन से उनका विकास होता है। कई विचार अस्पष्ट तथा अपक्व स्थिति में होते हैं। बातचीत से उनमें स्पष्टता परिपक्वता आती है। हमारा अपना द्रष्टिकोण अन्यों के द्रष्टिकोण से जब टकराता है तब उसमें अधिक उष्णता, गति या शक्ति आती है। प्रामाणिक विचार विनिमय विचार वृक्ष की खाद है, उसकी जड़ों में

जल सिन्चन है, उसके पर्णों पर प्रकाश का पतन है, उसकी डालियों को हिलाकर इधर उधर जमी मिट्टी या मल को उडा देने का साधन है। चन्द्रकान्त ! इस नाते आज के वाद से तुम्हारे साथ ही मुझे भी लाभ हुआ है। दोनों का लाभ। कौन किसे धन्यवाद दे। दोनों की प्रसन्नता और दोनों के लाभ में परस्पर हर्ष, यह सच्चे धन्यवाद का मार्ग है। मुझे अत्यंत संतोष है कि आज के वाद ने तुम्हें शान्ति दी और तुम्हारी आत्मा में बल आया। अब जाकर तुम्हें अपना काम करना चाहिए। प्रातःकाल का फलाहार भी अभी तुमने नहीं किया है। यहीं कुछ थोडा ले लो। अभी तक मन को आराम हुवा, अब शरीर को आराम दिया जाय

चन्द्रकान्त—नही भैया। अब स्नान करके कुछ खाउंगा। खाने की अभी मनोवृत्ति भी नहीं है। अच्छा तो चलूं !

चन्द्रकान्त उठ खडा हुआ। निरंजन भी उठा। चन्द्रकान्त चलने लगा। निरंजन उसे दरवाजे तक पहुंचाने गया। चन्द्रकान्त 'अच्छा' कहकर दरवाजे के बाहर हुआ और दो गुन्हाखाने लांघ अपने गुन्हाखाने में पहुंच गया। निरंजन बाहर देखता अपने दरवाजे में खडा रह गया। जरा देर में निरंजन ने देखा कि चन्द्रकान्त कुर्ता उतारे जेलका पोषाक पहने बाल्टी हाथ में लिए बाहर निकला और निरंजन के गुन्हाखाने की प्रतिकूल दिशा में नल पर पहुंच गया। बाल्टी भरी, उसे उठाया, लडखडाता अपने कमरे की ओर रवाना हुआ। बदन टेढ़ा है, गरदन झुकी है और आंखें नीची हैं। निरंजन को उसने दूर से देखा नहीं। अपने कमरे के पास आते आते थक गया। दरवाजे के पास बाल्टी रखकर लम्बी सांस ली और ऊपर देखा। दरवाजे में खडा निरंजन

दिखाई दिया। चन्द्रकान्त के चेहरे पर प्रसन्नता, संकोच आदि भाव सम्मिश्रित रूप में झलक गये। निरंजन ने हँसते हुए कह दिया "तुम्हारी सदा विजय हो।"

दमोह जेल
१२-१२-४४
से
२९-१२-४४